हिन्दू-धर्म के ज्ञान-मय क्रिया-पक्ष की शोध-पूर्ण प्रस्तुति

'कौल-कल्पतरु'

चण्डी

(सं० १९९६ वि०-सन् १९४२ ई० से प्रकाशित)

वर्ष - ५२

अङ्क ४

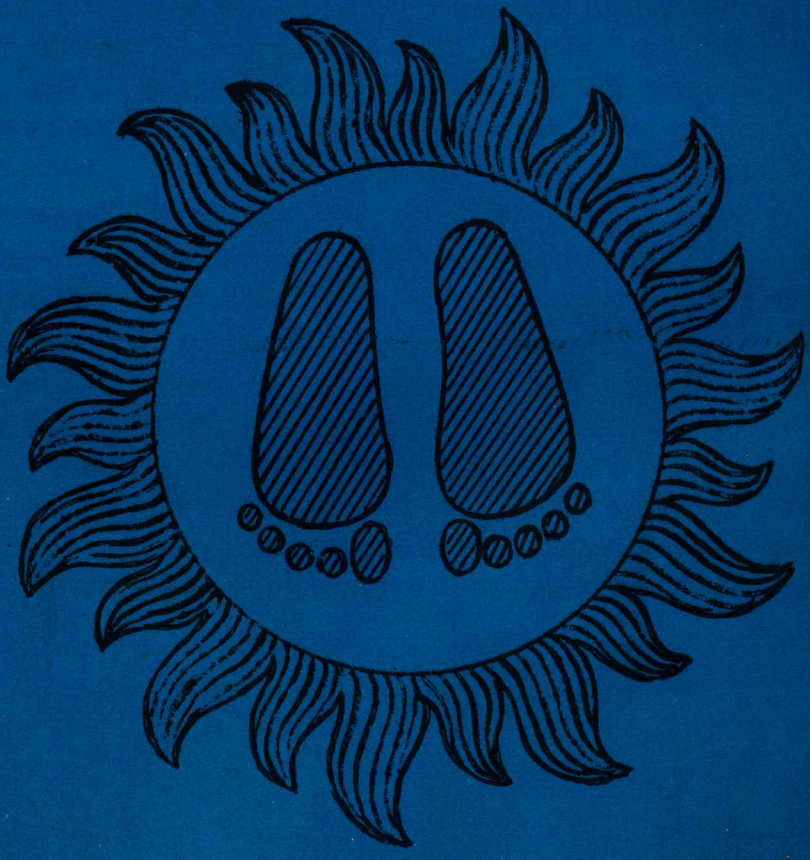

श्रीगुरु - पूर्णिमा अङ्क

श्रीकाली-कल्पतरु

श्रीकाली-तत्त्व-दर्शन, श्रीकाली-माहात्म्य, श्रीकाली-पूजा-विधि सहित

५०- ००/ सजिल्द ६० - ००

बाबाश्री एक अवतारी महा - पुरुष थे । उनका जन्म इस पवित्र भूमि में किसी विशेष उद्देश्य से हुआ था । उनका अपनी मातृ - भूमि से गहरा अनुराग था । वे उसके लिए जीवित रहे और उसी के लिए उन्होंने अपने नश्वर शरीर का त्याग भी किया और यह सब किया उन्होंने - एकान्त में रहकर गुप - चुप ही । किसी को कानों - कान तक खबर न होने दी । केवल, उनके इने - गिने विश्वास - पात्र भक्त ही उनके कार्य - कलापों को जान पाते थे ।

बाबा जी एक सिद्ध शाक्त, योगि - राज, तन्त्र - सिद्ध, तत्व - दर्शी, कुलाचारी, परम उदार, नीति - निपुण, दयालु एवं व्यवहार - कुशल महात्मा थे । उन्होंने दशों महा - विद्याओं की तथा उनके सम्बन्ध की नाना देवी - देवताओं की साधनाएँ करके अन्त में अघोर की सिद्धि - लाभ की थी ।

बाबा जी की रचनाएँ गम्भीर दृष्टि से ओत - प्रोत हैं । उनकी रचनाएँ काव्य - रस की व्यञ्जना से परिपूर्ण हैं तथा भक्त - जनों के मन को सरस भावना से अभिभूत करने की क्षमता रखती हैं । भक्त - जनों के मन, पूज्य बाबाश्री द्वारा विरचित गद्य या पद्य या निबन्ध के श्रवण या दर्शन - मात्र से जिस भाव से भर उठते हैं, उसका अनुभव 'बाबाश्री चरितामृत' नामक रचना - संग्रह को पढ़कर कोई भी पाठक हृदयङ्गम कर सकता है । इस रचना - संग्रह में जो भी डुबकी लगाएगा, उसका हृदय निस्सन्देह परमानन्द की उपलब्धि करेगा । मूल्य तीस रुपए ।

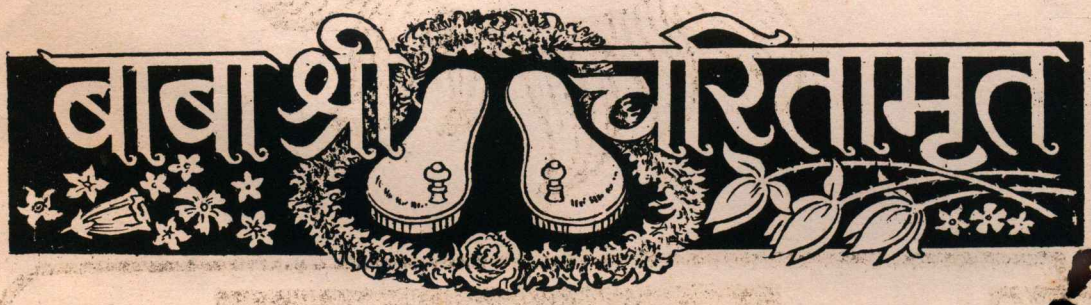

मानद सम्पादक
श्री रमादत्त शुक्ल

सम्पादक
श्री ऋतशील शर्मा

पता
चण्डी कार्यालय,
अलोपीबाग मार्ग,
प्रयागराज–२११००६
(उ० प्र०)

दूर-भाष
६०६७८३

शुल्क भारत में
एक प्रति : रु० ६

वार्षिक शुल्क : रु० ६५
आजीवन शुल्क : रु० ६५०

शुल्क विदेश में
हवाई डाक/समुद्री डाक

वार्षिक : रु० ६००/४००
आजीवन : ६०००/४०००

शुल्क मनीआर्डर या ड्राफ्ट कौल-कल्पतरु चण्डी के नाम से चण्डी कार्यालय,इलाहाबाद के पते पर भेजें ।

मुद्रक
परा वाणी प्रेस
अलोपीबाग मार्ग,
प्रयागराज–२११००६

वर्ष ५२] [अङ्क ४
आषाढ़, 'व्यय' सम्वत् २०५० वि० जुलाई, १९९३

* * *

श्रीगुरु-पूर्णिमा अंक

बन्दौं श्रीगुरु - पादुका,
ज्ञान - मूल सुख - कन्द ।
तत्त्व-विबोधक सिद्धि - निधि,
दायक परमानन्द ॥

इस अंक में

० श्रीगुरु-पूजन ... ९८
० श्रीगुरु-मण्डल-व्याख्या ... १०१
० श्रीगुरु-परम्परा ... १०५
० 'कुण्डलिनी-जागरण विशेषाङ्क'–एक आलोचना ... १०९
० 'कौल-मार्तण्ड' पं० कमलाकान्त मिश्र ... १११
० साधन-माला ... ११३
मन्त्र-शक्ति से परोपकार, श्री शत्रु-विध्वंसिनी-स्तोत्र,
रोग-निवारक प्रयोग, श्री नील-कण्ठ अघोरास्त्र स्तोत्र,
भगवती श्रीबाला-त्रिपुर-सुन्दरी मन्त्र-विधान
० माँ बगलामुखी ... १२६
० काहे को भूल गईं जगदम्बा ! ... १२८

'गुरु'-पूर्णिमा (३ जुलाई, १९९३) के पावन अवसर पर

श्री गुरु-पूजन

(गुप्तावतार बाबाश्री के प्रवचनों के आधार पर)

१ श्रीनाथादि गुरु-त्रयं

गुरु-नाम	दिव्य दैवत	गुरु-परम्परा	शक्ति	बीज, स्वर	गुण	क्रिया	लक्ष्य
१ श्रीनाथ	महा-विष्णु (कृष्ण)	स्व-गुरु	ज्ञान (पोषिणी)	उ, ई	सत्त्व	धारणा	उपदेश
२ दुर्ग-नाथ	महा-दुर्गा	परम-गुरु	इच्छा (जननी)	अ, ह, र	रज	गति	साधना
३ आदि-नाथ	महा-शिव (रुद्र)	परात्पर	क्रिया (लयात्मिका)	म्, म्	तम	काल	सिद्धि

श्रीविश्व-गुरु महा-शताक्षरी मन्त्र

ॐ ह्रीं ह्रीं ह्रीं, श्रीं श्रीं श्रीं, क्रीं क्रीं क्रीं, ऐं क्लीं सौः, हंसः सोऽहं, नमो भगवते जगन्नाथाय, आं आं आं, ईं ईं ईं, सर्व-कारण-कारणाय, हं ग्लौं, ह्रीं ॐ ह्रों, महा-मन्त्र-राज-रूपाय, श्रीमहा - भैरवी-चक्राधीश्वराय, हसक्षमलवरयूं, सहक्षमलवरईं क्ष्रौं क्ष्रौं क्ष्रौं, कएईलह्रीं, हसकहलह्रीं, सकलह्रीं, हसकरीं ह्लीं ह्लीं ह्लीं, हंसः सोऽहं, ॐ महा-ज्वाला-मालिने त्रिगुणात्मकाय, परम-गुरवे महा-पुरुषाय नमः ॥

२ गणपतिं

स्थूल दृश्य : प्रत्येक साधक को प्रथम वन्द्य । दर्शन-शक्ति : 'गं' ।

३ पीठ-त्रयं

आधार - त्रय, ऐं । मूलाधार—जालन्धर पीठ-मूलाकर्षण-अण्डाकर्षण । पात्राधार—पूर्ण-पीठ-गत्याकर्षण-अण्वाकर्षण । कारणाधार—काम-पीठ-बीजाकर्षण-स्थानाकर्षण ।

४ भैरवं

ईशानो भैरवः, ऐं ह्रीं श्रीं फ्रें फट् । काल-चक्र-शक्ति ।

५ सिद्धौघं

तत्त्व-शक्ति, अष्ट-सिद्धि-स्वामिनी महा-शक्तियाँ—महा-दुर्गाम्बा ईशित्व-सिद्धि-सहिता । सुन्दर्यम्बा महिमा-सिद्धि-सहिता । कालिकाम्बा अणिमा-सिद्धि-सहिता । पञ्चवाणाम्बा लघिमा-सिद्धि-सहिता । तारिण्यम्बा प्राप्ति-सिद्धि-सहिता । शुक - चन्द्रिकाम्बा प्राकाम्य-सिद्धि-सहिता । विशालिन्यम्बा गरिमा-सिद्धि-सहिता । स्वराम्बा वशित्व-सिद्धि-सहिता ।

सनकानन्दनाथ, सनन्दनानन्दनाथ, सनातनानन्दनाथ, सनत्कुमारानन्दनाथ, सनत्सुजातानन्दनाथ, यामदग्न्यानन्दनाथ, व्यासानन्दनाथ, शुकानन्दनाथ, वशिष्ठानन्दनाथ, वाम-देवानन्दनाथ, कौशिकानन्दनाथ, परापरानन्दनाथ ।

६ दिव्यौघं

ज्येष्ठानन्दनाथ, श्रेष्ठानन्दनाथ, बालानन्दनाथ, सद्योजातानन्दनाथ, वटुकानन्दनाथ ।
नन्द्यानन्दनाथ, अघोरानन्दनाथ, ईशानानन्दनाथ, वामदेवानन्दनाथ, तत्पुरुषानन्दनाथ ।

परमौघाः महा - पुरुषाः—दत्तात्रेय महा-पुरुषानन्दनाथ, शिवानन्दनाथ, श्रीनाथानन्दनाथ, दुर्ग-नाथानन्दनाथ।

७ बटुक-त्रयं

ह्रीं क्लीं श्रीं हुं फट्। मूलाग्नि—तमोगुणी-रूप काली (भैरव) स्कन्ध-वटुक। गत्यग्नि—सत्त्व-गुणी - रूप भुवनेशी (भैरव) विचित्र - वटुक। तरलाग्नि—रजोगुणी - रूप भैरवी (भैरव) चित्र - वटुक (आनन्द-भैरव)।

कुछ साधक 'भुवनेशी-भैरव' के स्थान में 'पीताम्बरा-वटुक' का पूजन करते हैं।

८ पद-युगं

क ए ई ल ह्रीं। १ हसकहलह्रीं—प्रकृति-पद : गति-पद, पुरुष - पद : स्थिर - पद—अर्द्ध-नारी-नटेश्वर। २ सकलह्रीं—अम्ब-पद, गुरु - पद। कोई साधक 'पद - युगं' से मात्र प्रकृति - पुरुष को ग्रहण करते हैं।

९ दूती-क्रमं

प्रपञ्च--भय से मन को चेतानेवाली सदसद्-विवेक-बुद्धि। अं आं ऐं क्लीं सौः ह्रीं श्रीं इं ईं द्रां द्रीं क्लीं ब्लुं सः। श्री श्रीयोन्यम्बा, चित्र-योन्यम्बा, महा - योन्यम्बा, दिव्य - योन्यम्बा, विश्व - योन्यम्बा, शङ्ख-योन्यम्बा, हस्ति-योन्यम्बा, महा-भूति-योन्यम्बा, काम-योन्यम्बा, पद्म-योन्यम्बा।

१० मण्डलं

१ ऐं ह्रीं श्रीं, रं, नमो दश - कलात्मने अग्नि - मण्डलाय श्रीवैश्वानर श्रीपादुकां पूजयामि। २ श्रीं ह्रीं ऐं, अं, नमो द्वादश-कलात्मने सूर्य-मण्डलाय श्रीआदित्य श्रीपादुकां पूजयामि। ३ ह्रीं क्लीं सौः मं, नमो षोडश-कलात्मने सोम-मण्डलाय श्रीसोम श्रीपादुकां पूजयामि।

११ वीरानष्ट

काल-चक्र-शक्ति : श्रीं ह्रीं फट् एं एं। १ असिताङ्ग-भैरव श्रीपादुकां पूजयामि। २ रुरु-भैरव श्रीपादुकां पूजयामि। ३ चण्ड-भैरव श्रीपादुकां पूजयामि। ४ क्रोध-भैरव श्रीपादुकां पूजयामि। ५ उन्मत्त-भैरव श्रीपादुकां पूजयामि। ६ कपाल-भैरव श्रीपादुकां पूजयामि। ७ भीषण-भैरव श्रीपादुकां पूजयामि। ८ संहार-भैरव श्रीपादुकां पूजयामि।

१२ चतुष्क-षष्टि

काल-चक्र के अष्ट-वीरों में, प्रत्येक की अष्ट-अष्ट क्रिया-शक्तियाँ ६४ योगिनियाँ कहलाती हैं।

ह्रीं ह्रीं ह्रीं ऐं क्लीं सौः श्रीं श्रीं।

कुलेशी, कुल - नन्दा च, वागीशी, भैरवी तथा। उमा, श्रीः शान्तया चण्डी, धूम्रा, काली, करालिनी॥
महा-लक्ष्मीश्च कङ्काली, रुद्र - काली, सरस्वती। वाग् - वादिनी च नकुली, भद्र - काली, शशि - प्रभा॥
प्रत्यङ्गिरा, सिद्ध - लक्ष्मीरमृतेशी च चण्डिका। खेचरी, भूचरी, सिद्धा, कामाक्षी, हिंगुला, बला॥
जया च विजया चाप्यजिता, नित्याऽपराजिता। विलासिनी तथा घोरा, चित्रा, मुग्धा, घनेश्वरी॥

सोमेश्वरी, महा - चण्डा, विद्या, हंसी, विनायका । वेद - गर्भा तथा भीमा, उग्रा, वैद्या च सद्-मतिः ॥
उग्रेश्वरी, चन्द्र - गर्भा, ज्योत्स्ना, सत्या, यशोवती । कुलिका कामिनी काम्या, ज्ञानवत्यथ डाकिनी ॥
राकिनी लाकिनी चाथ, काकिनी शाकिनीत्यपि । डाकिनीति चतुष्षष्टी, शक्तयः सिद्धि - दायिकाः ॥

१३ नवकं

हठ-सिद्ध नव-नाथाः–१ मत्स्येन्द्रनाथ, संक्षोभिणी-मुद्रा-सिद्ध । २ जालन्धरनाथ, विद्राविणी-मुद्रा-सिद्ध । ३ गोरक्षनाथ, आकर्षिणी-मुद्रा-सिद्ध । ४ कौण्डिन्यनाथ, उन्मादिनी-मुद्रा-सिद्ध । ५ भर्तृहरिनाथ, खेचरी-मुद्रा-सिद्ध । ६ देवनाथ, वशीकरिणी-मुद्रा-सिद्ध । ७ सिद्धनाथ, अंकुशा-मुद्रा-सिद्ध । ८ दिव्यनाथ, धेनु-मुद्रा-सिद्ध । ९ कलानाथ, योनि-मुद्रा-सिद्ध ।

१० वीरावली-पञ्चकं

१ लं, इन्द्र, भक्त । २ ह्रीं, ईशान, अघोर । ३ हं, ब्रह्मा (चिच्छक्ति), शाम्भवी-मुद्रा-सिद्ध । ४ ह्रौं, रुद्र, योगी । ५ क्लीं, विष्णु, ज्ञानी ।

१५ श्रीमन्मालिनि

आधिदैविक, आधिभौतिक, आध्यात्मिक । परमा शक्ति, महा - माया चिच्छक्ति (भगवती श्री मालिनी परा विद्या अनेक कोटि ब्रह्माण्ड-नायिका भगवती आद्या महा-चिच्छक्ति का नामान्तर है ।)

१६ मन्त्र-राज-सहितं

ह्रीं ॐ ह्रौं, पञ्चाशल्लिपि - वर्णाः । अघोर - मन्त्रः । श्री गुरु-शक्ति अनन्त है, अलक्ष्य है, गुण अवर्ण्य हैं, विशेष जगदम्बा जानें ।

१७ वन्दे गुरु-मण्डलं (गुरु-मण्डल-यन्त्र का पूजन-विधान)

विन्दु : विश्व-व्यापिनी महा-चिच्छक्ति भगवती मालिनी । वृत्त : मन्त्र-राज । त्रिकोण : गुरु-त्रय । षट्-कोण : ऊपर के दो कोणों में गणपति, नीचे के तीन कोणों में पीठ-त्रय और सबसे ऊपर शीर्ष-कोण में, भैरव ईशान । अष्ट-दल : पत्र के अग्र-भाग में सिद्धि-सहित दुर्गाम्बा आदि और दल के दोनों ओर सनकानन्दनाथादि सिद्धौघ । द्वादश-दल : दिव्यौघाः ११ और परमौघ - पुरुषाः १-१२ । षोडश - दल : दसदूती, बटुक-त्रय, पद-युगं १६ दल । अष्ट-दल : वीरानष्ट भैरव । योगिनी : ६४ । मण्डलं : चतुष्षष्टि योगिनी पश्चात् अन्तिम वृत्त में । नवकं : अष्ट - कोण में ८ और अष्ट - कोण के ऊपर के कोण में नीचे एक । वीरावली-पञ्चक : भूपुर के चार द्वारों में ४ और ईशान कोण में भगवान् ईशान ।

श्रीगुरु-मण्डल-व्याख्या

'कुल-मार्तण्ड' पण्डित योगीन्द्रकृष्ण दौर्गावत्ति जी शास्त्री

श्रीनाथादि-गुरु-त्रयं गण-पतिं पीठ-त्रयं भैरवं,
सिद्धौघं वटुक-त्रयं पद-युगं दूती-क्रमं मण्डलम् ।
वीरानष्ट-चतुष्क-षष्टि-नवकं वीरावली-पञ्चकं,
श्रीमन्मालिनि मन्त्र-राज-सहितं वन्दे गुरोर्मण्डलम् ॥

[उपर्युक्त 'श्रीनाथादि-गुरु-त्रयं०' गुरु-मण्डल के अर्चन का रहस्य - मय 'मन्त्र' है। पिछले पृष्ठों द्वारा प० पू० गुप्तावतार बाबाश्री के प्रवचनों के आधार पर इस रहस्य - मय 'मन्त्र' का विस्तृत पूजन - विधान प्रस्तुत है। आशा है कि सभी बन्धु इन दोनों निबन्धों को अत्यन्त ध्यान से पढ़कर उन्हें अपनी-अपनी साधना के स्तर पर हृदयङ्गम करने का प्रयत्न करेंगे। 'साधना' की सफलता के लिए इस 'मन्त्र' को हृदयङ्गम करना अथवा स - विधि पूजन करना अत्यन्त आवश्यक है। 'गुरु-पूर्णिमा', सं० २०५० वि० के पावन अवसर पर यह महत्त्व-पूर्ण उद्बोधक साहित्य हम आपके समक्ष सहर्ष प्रस्तुत कर रहे हैं।—सं०]

विनियोग—ॐ अस्य श्रीगुरु-मण्डल-महा-मन्त्रस्य हंस ऋषिः। गायत्री छन्दः। श्रीगुरु-मण्डलः देवता। ऐं बीजं। ह्रीं शक्तिः। क्लीं कीलकं। श्रीगुरु-मण्डल-प्रसाद-सिद्धयर्थे जपे विनियोगः।

ऋष्यादि-न्यास—श्रीगुरु-मण्डल-महा-मन्त्रस्य हंस-ऋषये नमः शिरसि। गायत्री-छन्दसे नमः मुखे। ऐं बीजाय नमः गुह्ये। ह्रीं शक्तये नमः पादयोः। क्लीं कीलकाय नमः सर्वाङ्गे। श्रीगुरु-मण्डल-प्रसाद-सिद्धयर्थे जपे विनियोगायः नमः अञ्जलौ।

इस प्रकार विनियोग, ऋष्यादि-न्यास कर मूल-मन्त्र से कर - हृदयादि - न्यास करे। फिर दिग्-बन्धन करे। अनन्तर 'श्रीनाथादि-गुरु-त्रयं०' इस मन्त्र को पढ़कर 'गुरु-मण्डल' का ध्यान करे तथा ब्रह्म-रन्ध्र में श्रीनाथादि-गुरु-पंक्ति का चिन्तन एवं पूजन करे।

'श्रीनाथादि-गुरु' तीन प्रकार के माने गए हैं—१ दिव्यौघ, २ सिद्धौघ और ३ मानवौघ। अतः प्रथम 'दिव्यौघ' का पूजन करना चाहिए।

१ दिव्यौघ—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं श्रीशिवानन्दनाथ परा - शक्त्यम्बा श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः ॥१ ॐ ऐं ह्रीं श्रीं श्रीसदा - शिवानन्दनाथ चिच्छक्त्यम्बा श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः ॥२ ॐ ऐं ह्रीं श्रीं श्रीईश्वरानन्दनाथ आनन्द - शक्त्यम्बा श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः ॥३ ॐ ऐं ह्रीं श्रीं श्रीरुद्र-देवानन्दनाथ इच्छा-शक्त्यम्बा श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः ॥४ ॐ ऐं ह्रीं श्रीं श्रीविष्णु-देवानन्दनाथ ज्ञान-शक्त्यम्बा श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः ॥५ ॐ ऐं ह्रीं श्रीं श्रीब्रह्म-देवानन्दनाथ क्रिया-शक्त्यम्बा श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः ॥६

२ सिद्धौघ—प्रत्येक नाम के पूर्व ॐ ऐं ह्रीं श्रीं और अन्त में श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः लगा लें—

१ श्रीसनकानन्दनाथ। २ श्रीसनन्दनानन्दनाथ। ३ श्रीसनातनानन्दनाथ। ४ श्रीसनत्कुमारा-नन्दनाथ। ५ श्रीशौनकानन्दनाथ। ६ श्रीसनत्सुजातानन्दनाथ। ७ श्रीदत्तात्रेयानन्दनाथ। ८ श्रीरैवता-नन्दनाथ। ९ श्रीवामदेवानन्दनाथ। १० श्रीव्यासानन्दनाथ। ११ श्रीशुकानन्दनाथ।

३ **मानवौघ** (प्रत्येक नाम के पूर्व **ॐ ऐं ह्रीं श्रीं** और अन्त में **श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः** लगा लें)।

१ श्रीनृसिंहानन्दनाथ। २ श्रीमहेशानन्दनाथ। ३ श्रीभास्करानन्दनाथ। ४ श्रीमहेन्द्रानन्दनाथ। ५ श्रीमाधवानन्दनाथ। ६श्रीविष्णुदेवानन्दनाथ।

कादि-विद्या, हादि - विद्या, षोडशी तथा परोपासकों के ओघ-त्रय पृथक् - पृथक् हैं। जो जिस विद्या का उपासक हो, वह उपर्युक्त ओघ-त्रय के स्थान पर अपने-अपने देवता के ओघ-त्रय का पूजन कर सकता है।

४ **गुरु-त्रय**—(१ गुरु, २ परम गुरु, ३ परमेष्ठि गुरु)—**ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हंसः शिवः सोहं-स्वरूप-निरूपण-हेतवे स्व - गुरु - श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः ।।१ ॐ ऐं ह्रीं श्रीं सोहं हंसः शिवः सोहं स्वच्छ-प्रकाश-विमर्श-हेतवे परम-गुरु श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः ।।२ ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ॐ हंसः शिवः सोहं स्वात्माराम-परमानन्द-पञ्जर-विलीन-तेजसे परमेष्ठि-गुरु-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः ।।३**

५ **गणपति** (महा - गणपति)—**ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं ग्लौं गं गणपतये वर वरद सर्व - जनं मे वश-मानय स्वाहा।**

६ **पीठ-त्रय**—**ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऐं हंसः शिवः सोहं अं आं सौः श्रीकाम - गिरि - पीठ ब्रह्मात्मक-शक्तचम्बा श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः ।।१ ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऐं हंसः शिवः सोहं श्रीपूर्ण-गिरि - पीठ विष्ण्वात्मक-शक्तचम्बा श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः ।।२ ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऐं हंसः शिवः सोहं श्रीजाल-न्धर-पीठ रुद्रात्मक शक्तचम्बा श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः ।।३**

७ **भैरव** (अष्ट-भैरव)—**ऐं ह्रीं श्रीं फ्रें फट् फां फीं ह्रीं मन्थान-भैरव श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः ।।१ ऐं ह्रीं श्री फ्रें फट् फां फीं ह्रीं श्रीषट्-चक्र भैरव श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः ।।२ ऐं ह्रीं श्रीं फ्रें फट् फां फीं ह्रीं रां फट्कार - भैरव श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः ।।३ ऐं ह्रीं श्रीं फ्रें फट् फां फीं ह्रीं श्रीऐकात्म-भैरव श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः ।।४ ऐं ह्रीं श्रीं फ्रें फट् फां फीं ह्रीं श्रीहवि-भक्ष्य-भैरव श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः ।।५ ऐं ह्रीं श्रीं फ्रें फट् फां फीं ह्रीं श्रीचण्ड - भैरव श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः ।।६ ऐं ह्रीं श्रीं फ्रें फट् फां फीं ह्रीं श्रीभ्रमर-भास्कर-भैरव श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः ।।७**

८ **सिद्धौघ**—(प्रत्येक नाम के आदि में **ह्रीं श्रीं सौः अं** और अन्त में **श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः** जोड़ लें)। १ श्री महा - दुर्मताम्बा सिद्ध। २ श्री सुन्दर्यम्बा सिद्ध। ३ श्री करालिकाम्बा सिद्ध। ४ श्रीत्रिवाणाम्बा सिद्ध। ५ श्री श्रीमाम्बा सिद्ध। ६ श्री करालयम्बा सिद्ध। ७ श्री खरानताम्बा सिद्ध। श्रीविशालिन्यम्बा सिद्ध।

९ **वटुक-त्रय**—(आदि में **ह्रीं श्रीं सौः क्लीं फट्** और अन्त में **श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः** जोड़ लें)। १ श्रीस्कन्द-वटुक। २ श्रीचित्र-वटुक। श्रीविरञ्चि-वटुक।

१० **पद-युग**—(आदि में **हसकलह्रीं हसकहलह्रीं सकलह्रीं** और अन्त में **श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः** जोड़ लें)। १ श्रीप्रकाश। २ श्रीविमर्श।

११ **दूती-क्रम**—(आदि में **अं आं सौः ह्रीं श्रीं सौः** और अन्त में **दूतिका - श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः** जोड़ लें)। १ श्रीयोन्यम्बा। २ श्रीयोनि-सिद्ध-नाथाम्बा। ३ श्रीमहा - योन्यम्बा। ४ श्री-महा-योनि-सिद्ध-नाथाम्बा। ५ श्रीदिव्य-योन्यम्बा। ६ श्रीदिव्य - योनि - सिद्ध - नाथाम्बा। ७ श्रीशङ्ख-

योन्यम्बा। ८ श्रीशङ्ख-योनि-सिद्ध-नाथाम्बा। ९ श्रीपद्म-योन्यम्बा। १० श्रीपद्म-योनि-सिद्ध-नाथाम्बा।

१२ मण्डल—ह्रीं श्रीं ऐं अग्नि-मण्डल श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः ।।१ ह्रीं श्रीं क्लीं सूर्य-मण्डल श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः ।।२ ह्रीं श्रीं सौः सोम - मण्डल श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः ।।३

१३ वीरानष्ट—(आदि में **ह्रीं श्रीं फट् फां फीं** और अन्त में **श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयमि नमः** जोड़ लें)। १ श्रीसृष्टि-भैरव। २ श्रीस्थिति-भैरव। ३ श्रीसंहार-भैरव। ४ श्रीरक्त-वीर-भैरव। ५ श्री-यम-वीर-भैरव। ६ श्रीमृत्यु-वीर-भैरव। ७ श्रीभद्र-वीर-भैरव। ८ श्रीपरमार्थ - वीर - भैरव। ९ श्री-मार्तण्ड-वीर-भैरव। १० श्रीकालाग्नि-रुद्र-वीर-भैरव।

मन्त्र में 'अष्ट-वीर' बताए गए हैं, किन्तु व्याख्या में तथा तन्त्र - ग्रन्थों में १० बताए गए हैं। तन्त्र-ग्रन्थों के अनुसार ही व्याख्या की गई है, अतएव १० लिखे हैं।

१४ चतुष्क-षष्टि (६४)—(आदि में **'ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ह्रीं सौः ह्रीं'** एवं **'श्रीं'** और अन्त में **श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः** जोड़ लें।)

१ मङ्गला-नाथा। २ चण्डिका-नाथा। कलुका-नाथा। ४ पट्टहा-नाथा। ५ कूर्मा-नाथा। ६ धनदा-नाथा। ७ गन्धा-नाथा। ८ गगना-नाथा। ९ मतङ्गा-नाथा। १० चम्पका-नाथा। ११ कैवर्ता-नाथा। १२ मातङ्ग-गमना-नाथा। १३ सूर्य-भक्ष्या-नाथा। १४ नभो-भक्ष्या-नाथा। १५ स्तौतिका-नाथा। १६ रूपिका-नाथा। १७ वंष्ट्रा-पूज्या-नाथा। १८ धूम्राक्षा-नाथा। १९ ज्वाला-नाथा। २० गान्धारा-नाथा। २१ गगनेश्वरा - नाथा। २२ माया - नाथा। २३ महा - माया - नाथा। २४ नित्या-नाथा। २५ शाला-नाथा २६ विश्वा-नाथा। २७ कामिनी - नाथा। २८ उमा - नाथा। २९ श्रिया - नाथा। ३० सुभगा-नाथा। ३१ सर्वगा-नाथा। ३२ लक्ष्मी-नाथा। ३३ विद्या - नाथा। ३४ मीना - नाथा। ३५ अमृता-नाथा। ३६ चन्द्रा-नाथा। ३७ सिद्धा - नाथा। ३८ श्रद्धा - नाथा। ३९ अनन्ता-नाथा। ४० शम्बरा-नाथा। ४१ उल्का-नाथा। ४२ त्रैलोक्या-नाथा। ४३ भीमा-नाथा। ४४ राक्षसी-नाथा। ४५ मणि-नाथा। ४६ प्रचण्डा-नाथा। ४७ अनङ्गा-नाथा। ४८ विधि-नाथा। ४९ अनभिहिता-नाथा। ५० नन्दिनी-नाथा। ५१ महा-मना-नाथा। ५२ सुन्दरी-नाथा। ५३ विश्वेश्वरी-नाथा। ५४ काल-नाथा। ५५ महा-काल-नाथा। ५६ अभया-नाथा। ५७ विकारा-नाथा। ५८ महा-विकारा-नाथा। ५९ सर्वगा-नाथा। ६० सकला-नाथा। ६१ पूतना-नाथा। ६२ सर्वरी - नाथा। ६३ व्योमा-नाथा। ६४ ज्येष्ठा-नाथा।

किसी पुस्तक में 'श्रीज्येष्ठा-नाथा' तीसरी संख्या पर है। किसी पुस्तक में 'अनङ्ग-विधि-नाथा' एक पद कर दिया है। जहाँ एक पद है, वहाँ 'विधि-नाथा' के स्थान में 'रवि-नाथा' लिखी गई है। हस्त-लिखित तान्त्रिक पुस्तकों में पाठ-परिवर्तन होना स्वाभाविक है।

१५ मुद्रा-नवक (नव मुद्रा)—१ द्रां सर्व-संक्षोभिणी-मुद्रायै नमः। २ द्रीं सर्व-विद्राविणी-मुद्रायै नमः। ३ क्लीं सर्वाकर्षिणी-मुद्रायै नमः। ४ ब्लूँ सर्व-वशङ्करी-मुद्रायै नमः। ५ सः सर्वोन्मादिनी-मुद्रायै नमः। ६ क्रौं सर्व-महांकुशा-मुद्रायै नमः। ७ हसखफ्रें सर्व-खेचरी-मुद्रायै नमः। ८ ह्स्रौं सर्व-बीजा-मुद्रायै नमः। ९ ऐं सर्व-योनि-मुद्रायै नमः। नव-मुद्राम्बायै नमः।

१६ वीरावली-पञ्चक—(पाँच-वीर-समूह) आदि में **'ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं सौः'** और अन्त में **'नमः'** जोड़ लें।) १ लं ब्रह्म-वीरावल्यै। २ वं श्रीविष्णु-वीरावल्यै। ३ रं श्रीरुद्र-वीरावल्यै। ४ यं श्रीईश्वर-वीरावल्यै। ५ हं श्रीसदा-शिव-वीरावल्यै।

किसी-किसी आचार्य ने 'वीरावली' को पृथक् कर 'पञ्चकं' को अलग कर दिया है। 'पञ्चकं' पृथक् माननेवालों के मत में—१ पञ्च-लक्ष्मी, २ पञ्च-कोश, ३ पञ्च-कल्पलता, ४ पञ्च-काम-दुघा और ५ पञ्च-रत्न-विद्या—यह **'पञ्च - पञ्चिका'** दी गई है, किन्तु हमारी समझ में तो तत्पुरुष समास ठीक है। पञ्च-ब्रह्मों के नाम से 'वीरावली-पञ्चक' की कल्पना की गई है और यदि 'पञ्च - पञ्चिका' भी सम्मिलित की जाए, तो हानि कोई नहीं। 'अधिकस्याधिकं फलम्' के अनुसार 'गुरु-मण्डल' की वृद्धि ही है।

१७ श्रीमन्मालिनि - मन्त्र-राज के सहित—(१) ऐं ह्रीं श्रीं ऐं ॐ। अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं ऌं ॡं एं ऐं ओं औं अं अः। कं खं गं घं ङं। चं छं जं झं ञं। टं ठं डं ढं णं। तं थं दं धं नं। पं फं बं भं मं। यं रं लं वं। शं षं सं हं ळं क्षं। हंसः सोहं मालिन्यम्बायै नमः।

(२) ॐ उग्रं वीरं महा-विष्णुं, ज्वलन्तं सर्वतोमुखम्। नृसिंहं भीषणं भद्रं, मृत्यु-मृत्युं नमाम्यहम्॥

यहाँ पर भी **'श्रीमालिनी मन्त्र'** अलग दिखाकर **'मन्त्र - राज'** पद की अलग व्याख्या कर **'श्री-नृसिंह'** का ध्यान तथा मन्त्र दिया गया है तथा **'वन्दे गुरोर्मण्डलम्'** से पूर्वोक्त गुरु - मण्डल की वन्दना समष्टि-रूप से की गई है, किन्तु बहुत-सी पुस्तकों में **'गुरु-मण्डल'** की व्याख्या भी पृथक् की गई है।

किसी-किसी ग्रन्थ में **'श्रीनाथादि-गुरु-त्रयं'** में **'नाथादि'** के आगे लगी हुई **'श्री'** को भी पृथक् किया गया है और उसका अर्थ **'लक्ष्मी'** किया गया है, किन्तु **'नाथ'** शब्द के साथ **'श्री'** शब्द का सर्वदा संयोग रहता है। यथा—**'श्रीनाथ-पादाम्बुज-दीर्घ-नौका'** इत्यादि में। 'श्री' शब्द संयुक्त करने की रीति अन्यत्र भी देखी जाती है। यथा—श्रीविद्या, श्रीमाता, श्रीमहा-राज्ञी, श्रीमन्सिंहासनेश्वरी, श्रीगुरु-चरण-सरोज-रज इत्यादि।

'श्री' को पृथक् भी कर दिया जाय, तो 'गुरु-मण्डल' की ही वृद्धि होती है, ह्रास नहीं। जो **'मन्त्र-राज'** पद को पृथक् कर उसका अर्थ **'नृसिंह मन्त्र'** करते हैं, उनके मत में 'श्री' का अर्थ **'लक्ष्मी'** करना भी युक्ति-सङ्गत है। भगवान् के साथ लक्ष्मी का होना उचित ही है।

[यहाँ यह उल्लेखनीय है कि शाक्त-धर्म की रहस्य-मयी **'महा-पूजा'** में, जो **'चक्र-पूजा'**, **'निशा-पूजा'** आदि नामों से प्रख्यात है, **'पात्र-वन्दना'** के प्रारम्भ में **'श्रीनाथादि-गुरु-त्रयं'** द्वारा **'गुरु-मण्डल'** की स्तुति करने के बाद ही पहले पात्र की वन्दना की जाती है, किन्तु इस 'स्तुति' के अन्तर्गत आनेवाले १७ पदों का तात्पर्य इने - गिने साधक ही जानते हैं। इसी से **'चण्डी'** में उक्त व्याख्या विगत वर्षों में अनेक बार प्रकाशित की गई और **'श्रीनाथादि-गुरु-त्रयं'** नामक पुस्तक में भी उसका प्रकाशन किया गया, जो अब प्राप्य नहीं है। **'श्रीपीताम्बरा-पीठ'** द्वारा प्रकाशित पुस्तक **'सप्त-विंशति रहस्यम्'** (मूल्य १५ रु०) में भी इस स्तुति की विस्तृत व्याख्या दी गई है। **'चक्र-पूजा के स्तोत्र'** (मूल्य ८ रु०) में 'कौल-कल्पतरु' शुक्ल जी द्वारा इस स्तुति का हिन्दी पद्यानुवाद प्रस्तुत किया गया है। आवश्यकता है कि इन सबका तुलनात्मक अध्ययन कर सभी पदों का प्रामाणिक तात्पर्य जिज्ञासुओं के लाभार्थ प्रकाशित किया जाय। आशा है, विद्वान् एवं अनुभवी साधक इस ओर ध्यान देने की कृपा करेंगे।—सं०]

श्रीगुरु-परम्परा

('श्री श्रीविद्यार्णव तन्त्र' के आधार पर)

[साधकों को अपनी वंश-परम्परा के ज्ञान से अधिक कल्याण-कारिणी **'गुरु-परम्परा'** का ज्ञान अत्यावश्यक है। यतः जन्म-दाता 'पिता' से, मन्त्र-दाता शिव-स्वरूप 'गुरु' श्रेष्ठ होता है। अतः सर्वदा, सर्वथा, सर्वत्र **गुरु-क्रम का पूजन** अत्यावश्यक है। मन्त्र-दाता गुरु को परम-गुरु, शक्ति अर्थात् जिस महा-विद्या की दीक्षा ग्रहण की है, उसे परापर गुरु और शिव को परमेष्ठी गुरु मानना चाहिए। सब मन्त्र और विद्याओं में महा-शक्ति (महा-विद्या, जिसका मन्त्र ग्रहण किया है) प्रकृति-रूपिणी है, गुरु (मन्त्र-दाता पुरुष) साक्षात् शिव-स्वरूप है और तदनन्तर गुरु-सन्तति (गुरु-क्रम है)। अतः **'गुरु-क्रम'** का ज्ञान नितान्त आवश्यक है। यहाँ **'श्री श्रीविद्यार्णव तन्त्र'** के आधार पर **'गुरु-परम्परा'** विषयक कुछ विवरण प्रस्तुत है। आशा है कि पाठक-बन्धु इससे लाभान्वित होंगे—सं०]

श्री १०८ देशिक-प्रवर स्वामी विद्यारण्य-विरचित 'श्री श्रीविद्यार्णव तन्त्र' में गुरुओं के आयुधों का वर्णन दिया है। यथा—

खेटं कपालं च त्रिशूलं मुद्गरं तथा। खट्वाङ्गं शर-चापौ च, दधानाश्च वराभये॥
तुरीये यामिनी-यामे, कुण्डलिन्या महौजसि। ते विसर्गादधो-भागे, लाक्षा-रस-सम-प्रभे॥
चिन्तनीयाः प्रयत्नेन, विद्या-संसिद्धि-हेतवे। एतान् कुल-गुरुन् यत्नान्, न चिन्तयति साधकः॥
तस्य पूजा जपश्चैव, स्नान-दानादिकं वृथा। एतान् कुल-गुरुन् ध्यायेत्, ऊर्ध्वाम्नायर्ण-दीक्षितः॥

अर्थात् खेट, कपाल, त्रिशूल, मुद्गर, खट्वाङ्ग, शर (वाण), चाप (धनुष), वर और अभय—इन आयुधों के धारण करनेवाले कुल-गुरुओं का साधक रात्रि के चतुर्थ प्रहर में लाक्षा-रस के समान रक्त-वर्ण कुण्डलिनी के तेज-पुञ्ज में यत्न-पूर्वक विद्या-सिद्धि के लिए ध्यान करे। यदि साधक ऐसा नहीं करता, तो उसकी विद्या (मन्त्र) का जप, पूजा, स्नान-दान, आदि सब निरर्थक होते हैं। अतः ऊर्ध्वाम्नायी साधक को इनका चिन्तन करना आवश्यक है।

ऊर्ध्वाम्नाय-क्रम में ओघ-त्रय (दिव्य, सिद्ध और मानव) गुरुओं को पृथक्-पृथक् इस प्रकार बताया गया है—

१. **ग्यारह दिव्यौघ**—१ ब्रह्मा, २ विष्णु, ३ रुद्र, ४ ईश्वर, ५ सदाशिव, ६ इच्छा-शक्ति, ७ ज्ञान-शक्ति, ८ क्रिया-शक्ति, ९ कुण्डलिनी, १० मातृका और ११ पर-शक्ति।

२. **आठ सिद्धौघ**—१ आदि-नाथ, २, पर-शक्ति, ३ अचिन्त्यनाथ, ४ अचिन्त्य-शक्ति, ५ अव्यक्त-नाथ, ६ अव्यक्त-शक्ति, ७ कुलेश्वर और ८ कुलेश्वरी।

३. **मानवौघ**—१ तूष्णीश, २ सिद्धाम्बा, ३ मित्र, ४ कुब्जाम्बा, ५ गगन, ६ चाटुली, ७ चन्द्र-गर्भ, ८ बलि-भागिनी, ९ मुक्त, १० महिला, ११ ललित, १२ शङ्खाम्बा, १३ श्रीकण्ठ, १४ श्रीकण्ठाम्बा, १५ परेश्वरी, १६ कुमार, १७ सहजाम्बा, १८ रत्न, १९ ज्ञानदेवी, २० ब्रह्मा, २१ नादिनी, २२ अजेश्वर, २३ अजेश्वराम्बा, २४ प्रतिष्ठानन्दनाथ, २५ सहजाम्बा, २६ शिव, २७ प्रतिभाम्बा, २८ चिदानन्द, २९ सहजाम्बा, ३० श्रीकण्ठ, ३१ आनन्द-विद्या, ३२ शिव, ३३ सहजाम्बा, ३४ सोम, ३५ सहजाम्बा, ३६ संविदानन्दनाथ, ३७ सहजाम्बा, ३८ विबुधानन्दनाथ, ३९ विबुधाम्बा, ४० भैरव, ४१ भैरव्यम्बा, ४२ आनन्दनाथ, ४३ अनन्दिन्यम्बा, ४४ कामेश्वर, ४५ कामेश्वर्यम्बा, ४६ कमलानन्दनाथ और ४७ सहजाम्बा—ये मानवौघ गुरु हैं। ये द्विभुज हैं और वराभय धारण करते हैं।

ऊर्ध्वाम्नायान्तर्गत शाम्भव-क्रम में श्रीषोडशी महा-विद्या के उपासकों का गुरु-क्रम इस प्रकार दिया है—१ श्री व्योमातीताम्बा, २ व्योमेश्यम्बा, ३ व्योमगाम्बा, ४ व्योम-वारिण्यम्बा और ५ व्योम-स्थाम्बा—ये पञ्चाम्बाएँ दिव्यौघ-गुरु हैं।

१ उन्मनाकाशानन्दनाथ, २ समनाकाशानन्दनाथ, ३ व्यापकाकाशानन्दनाथ, ४ शक्त्याकाशानन्दनाथ, ध्वन्याकाशानन्दनाथ, ६ ध्वनि-मात्राकाशानन्दनाथ, ७ अनाहताकाशानन्दनाथ, ८ विन्द्वाकाशानन्दनाथ और ९ द्वन्द्वाकाशानन्दनाथ—ये नौ 'सिद्धौघ गुरु' हैं।

१ परमात्मानन्दनाथ, २ शाम्भवानन्दनाथ, ३ चिन्मुद्रानन्दनाथ, ४ वाग्भवानन्दनाथ, ५ लीलानन्दनाथ, ६ सम्भ्रमानन्दनाथ, ७ चिदानन्दनाथ, ८ प्रसन्नानन्दनाथ और ९ विश्वानन्दनाथ—ये नौ 'मानवौघ' गुरु हैं।

उक्त दिव्यौघ, सिद्धौघ और मानवौघ गुरुओं की पूजा के अनन्तर—

स्व-गुरु-क्रम की पूजा होती है। प्रत्येक गुरु-नाम के प्रारम्भ में 'श्री' और अन्त में **'आनन्दनाथ नमः'** जोड़ लेना चाहिए, जैसे—**श्रीकपिलानन्दनाथ नमः** इत्यादि।

कपिल, वशिष्ठ, सनक, सनन्दन, भृगु, सनत्, सुजत्त-वाम-देव, नारद, गौतम, शौनक, शक्ति, मार्कण्डेय, कौशिक, पराशर, शुक्र, अङ्गिरा, कण्व, जावालि, भरद्वाज, वेद-व्यास, ईशान, रमण, कपर्दी, भूधर, सुभट, जलज, भूतेश, परम, विनय, भरण, पद्मेश, सुभग, विशुद्ध, समर, कैवल्य, गणेश्वर, सुपाथ, विबुध, योग, विज्ञान, अनङ्ग, विभ्रम, दामोदर, चिदाभास, चिन्मय, कलाधर, वीरेश्वर, मन्दार, त्रिदश, सागर, मृड़, हर्ष, सिंह, गौड़, वीर, अघोर, ध्रुव, दिवाकर, चक्र-धर, प्रमथेश, चतुर्भुज, आनन्द, भैरव, वीर, गौड़, पराचार्य, सत्य-निधि, रामचन्द्र, गोविन्द और श्री शङ्कराचार्य। इन गुरुओं की संख्या एक-सप्तति अर्थात् इकहत्तर ७१ है।

'श्री श्रीविद्यार्णव तन्त्र' के अनुसार भगवान् शङ्कराचार्य के चौदह शिष्य दर्शाए हैं, जिनमें से शङ्कराचार्य, बोधाचार्य, गीर्वाणाचार्य, पद्मपादाचार्य और आनन्द-तीर्थाचार्य—ये पाँच भिक्षु अर्थात् संन्यासी थे। शेष नौ शिष्य सुन्दर, विष्णु शर्मा, लक्ष्मण, मल्लिकार्जुन, त्रिविक्रम, श्रीधर, कपर्दी, केशव और दामोदर गृहस्थ थे। ये लोग अपने विषय के अद्भुत विद्वान् थे और 'शङ्कर' की उपाधि से विभूषित थे तथा भगवती की ही आत्मा माने जाते थे। पद्म-पादाचार्य के माण्डलिक, पर-पावक, निर्वाण, गोवर्धन, चिदानन्द और शिवोत्तम—ये छः शिष्य थे। बोधाचार्य के शिष्य केरल-प्रदेश के निवासी थे अर्थात् केरल प्रदेश में शाक्त-धर्म को फैलानेवाले बोधाचार्य थे। गीर्वाणाचार्य के शिष्य गीर्वाण पण्डित तथा उनके शिष्य विबुधेन्द्र और उनके शिष्य सुधीन्द्र तथा उनके शिष्य मन्त्र-गीर्वाण हुए और उनके भी अनेक शिष्य हुए। महात्मा आनन्द-तीर्थ के अनेक गृहस्थ शिष्य हुए, जो पादुका, पीठ और सम्प्रदाय के विशेषज्ञ थे।

भगवान् शङ्कराचार्य के जो नौ गृहस्थ शिष्य बने थे, उनकी परम्परा निम्न प्रकार है—

सुन्दराचार्य के शिष्य पीठ-नायक (पीठाधिपति), भिक्षु (संन्यासी) और गृहस्थ तीनों प्रकार के लोग थे। विष्णु शर्मा के शिष्य पण्डित प्रगल्भाचार्य हुए और उनके शिष्य **'श्री श्रीविद्यार्णव तन्त्र'** के रचयिता श्री १०८ स्वामी विद्यारण्य हुए। श्री स्वामी जी ने अपने ग्रन्थ में लिखा है कि इस ग्रन्थ की समाप्ति पर श्री महा-त्रिपुरसुन्दरी जगदम्बा ने प्रत्यक्ष दर्शन देकर मुझे वर माँगने के लिए कहा, तो मैंने निवेदन किया कि 'हे माता! यदि आप प्रसन्न हैं, तो जो साधक मेरी पुस्तक में मेरा लिखा गुरु-

क्रम और मन्त्रों को देखकर श्रद्धा-पूर्वक मुझे अपना गुरु मानकर योग्य गुरु के अभाव में गुरु-सन्तति के ज्ञान से दीक्षा के बिना भी तेरे मन्त्र का जप करें, उनको सब प्रकार की सिद्धि तुम्हारे प्रसाद से प्राप्त हो जाए, यही मेरी तुम्हारे चरणों में प्रार्थना है।" श्रीमहा-त्रिपुरसुन्दरी 'एवमस्तु' कहकर अन्तर्धान हो गईं। अतः इस 'गुरु-क्रम' के ज्ञान-मात्र से जगदम्बा सन्तुष्ट हो जाती हैं।

विन्ध्य-प्रदेश के सब निवासी मल्लिकार्जुन के शिष्य बने और वहाँ पर उनकी ही शिष्य-परम्परा विद्यमान है।

महात्मा त्रिविक्रम के शिष्य उड़ीसा प्रान्त में व्याप्त हुए। उड़ीसा का प्राचीन नाम **'जगन्नाथ प्रदेश'** था। गौड़, मैथिल और वङ्ग-प्रदेश के निवासी श्रीधराचार्य के मतानुयायी हैं अर्थात् उनके द्वारा वहाँ शाक्त-धर्म का प्रचार हुआ। विश्वनाथ-पुरी 'काशी' तथा महाराज रामचन्द्र की पुरी 'अयोध्या' में तथा उनके चारों ओर कपर्दी के द्वारा इस सम्प्रदाय को व्याप्ति हुई अर्थात् वहाँ के निवासी आचार्य कपर्दी के शिष्य हुए। भगवान् शङ्कर के शिष्यों के अतिरिक्त इस सम्प्रदाय का चलानेवाला दूसरा नहीं हुआ। अतएव लिखा है—

सम्प्रदायो हि नान्योऽस्ति, लोके श्रीशङ्कराद् बहिः।

'श्री शङ्कर' शब्द से श्री भगवान् शङ्कर और श्री शङ्कराचार्य दोनों का ग्रहण है।

ग्रन्थकार लिखते हैं कि 'कादि-मत' के प्रतिपादन करनेवाले 'श्रीतन्त्रराज', **'श्रीत्रिपुरार्णव'**, 'श्रीयोगिनी-हृदय' और 'श्रीमातृकार्णव'—ये चार मुख्य ग्रन्थ हैं तथा काली-शक्ति-मत में अनेक ग्रन्थ हैं। इन दोनों मतों का जाननेवाला साधक शिव-रूप हो जाता है। अतः सिद्धि प्राप्त करनेवाले मनुष्य को इस सम्प्रदाय से भली-भाँति परिचित होना चाहिए और इसे गुप्त रखने में ही सिद्धि प्राप्त होती है, अन्यथा **'प्राकट्याच्चिरयः'**—इस 'परशुराम - सूत्र' के अनुसार नरक-निवास करना ही पड़ता है।

ग्रन्थकार **'श्री श्रीविद्यार्णव-तन्त्र'** की रचना में श्री महा-त्रिपुर-सुन्दरी की आज्ञा को मुख्यता देते हुए लिखते हैं कि 'अम्बा की आज्ञानुसार विविध तन्त्रों एवं यामल ग्रन्थों का शोध कर एवं **'मत-द्वय'** को ध्यान में रखकर इस **'श्रीविद्यार्णव'** नामक ग्रन्थ की रचना लोक-हित के लिए की है।

'मत-द्वय' से **'कादि-मत'** और **'काली-मत'** की ओर ही संकेत है।

'काली-मत' के अनुसार 'गुरु-क्रम' निम्न प्रकार है—

श्री प्रह्लादानन्दनाथ, सनकानन्दनाथ, वशिष्ठानन्दनाथ, कुमारानन्दनाथ, क्रोधानन्दनाथ, शुकानन्दनाथ, ध्यानानन्दनाथ, बोधानन्दनाथ और सुरानन्दनाथ ये नौ (नव) **'कुल-गुरु'** हैं। ये द्वि-नेत्र, द्वि-भुज तथा वराभय धारण करनेवाले हैं।

श्री विरूपानन्दनाथ, चिन्मयानन्दनाथ और चित्-शक्त्यम्बा—ये तीन **'दिव्यौघ'** गुरु हैं।

श्री प्रबोधानन्दनाथ, सुवेशानन्दनाथ, अनन्तानन्दनाथ, सितानन्दनाथ, सुधानन्दनाथ, त्रिमूर्त्यानन्दनाथ और झिण्टीशानन्दनाथ—ये सात **'मानवौघ'** गुरु हैं।

ध्रुव (ॐकार), तार-त्रय (**ऐं ह्रीं श्रीं**), **श्रीपादुकां पूजयामि**—ये सब जोड़कर पूजन-मन्त्र बनता है अर्थात् गुरु के नाम से पहले ॐकार और त्रितारी जोड़कर पीछे **'श्रीपादुकां पूजयामि'** जोड़ देना चाहिए। गुरु के नाम के पूर्व **'श्री'** और नाम के अन्त में **'आनन्दनाथ'** जोड़ लेना चाहिए।

'कादि-विद्या' के उपासकों की गुरु-परम्परा निम्न प्रकार है—

पर-प्रकाश, पर-शिव, पर-शक्ति, कौलेश्वर, शुक्ल-देव्यम्बा, कुलेश्वर और कामेश्वर्यम्बा—ये सात **'दिव्यौघ'** गुरु हैं।

भोगानन्दनाथ, क्लिन्नानन्दनाथ, समयानन्दनाथ और सहजानन्दनाथ—ये चार **'सिद्धौघ'** गुरु हैं। गगनानन्दनाथ, विश्वानन्दनाथ, विमलानन्दनाथ और प्रियानन्दनाथ—ये चार **'मानवौघ'** गुरु हैं। इन सबकी यथा-स्थान पूजा कर पश्चात् नीचे दी गई **'गुरु-सन्तति'** की पूजा करे—

कपिल से लेकर व्यास-पर्यन्त पूर्वोक्त २१ गुरु- सन्तति तथा करुण, वरुण, विजय, समर, गुण, बल, विश्वम्भर, सत्य, प्रिय, श्रीधर, शारद, सकलेश. विलास, नित्येश, विश्व-पुरुष, गोविन्द, विबुध, सिंह, वीर, सोम, दिवाकर, अचल, वाग्भव, नाद, मोहन, सुलभ, शिव, मृत्युञ्जय, वासुदेव, शरण, सनन्दन, आकाश, गो-प्रिय, हर्ष, भर्ग, काम, महीधर, ईशान, गणेश, कपाल, भैरव और दिव—ये ४२ गुरु तथा गौड़ से लेकर शङ्कर तक ये सात गुरु अर्थात् गौड़पादाचार्य, भगवत गोविन्दाचार्य, शङ्कराचार्य, पद्मपादाचार्य, हस्तामलकाचार्य, तन्त्रोटकाचार्य और वार्तिककार (सुरेश्वराचार्य)। भगवान् शङ्कराचार्य के शिष्यों की उपाधि भी शङ्कराचार्य थी। अतएव अद्यावधि भी चार पीठों के आचार्य शङ्कराचार्य के नाम से व्यवहृत होते हैं। इस सम्पूर्ण **'गुरु-सन्तति'** की संख्या मिलाकर ७१ इकहत्तर होती है।

अपने **'गुरु-क्रम'** के विधान के अनुसार पूजा, तर्पण, होम और जप तथा न्यास के समय **'गुरु-सन्तति'** का स्मरण करने से साधक निस्सन्देह 'सिद्धि' को प्राप्त करता है। बिना **'गुरु-क्रम'** के जाने उपासना करनेवाला साधक पथ-भ्रष्ट होता है। पथ-भ्रष्ट हो जाने से मन्त्र और विद्या फल-दायक नहीं होते हैं। शिष्य बनकर जो **'गुरु-क्रम'** नहीं जानते, उनके मन्त्र-तन्त्र सब निष्फल होते हैं। साधकों को अपने **'गुरु-क्रम'** के कम-से-कम २० अथवा नौ या सात अथवा कम-से-कम गुरु, परम-गुरु और परमेष्ठी गुरुओं का ज्ञान तो अवश्यमेव होना चाहिए।

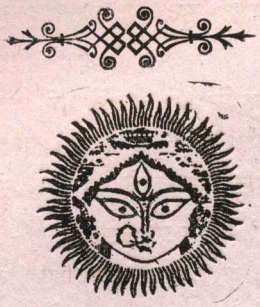

कौल-कल्पतरु चण्डी

'चण्डी' मासिक पत्रिका की विशेषता यह है कि यदि आप इसे ध्यान से पढ़ने की कृपा करेंगे, तो आपको **हिन्दू-धर्म के 'व्यावहारिक पक्ष'** को समझने में बड़ी सरलता होगी। 'हिन्दू - धर्म' केवल एक सिद्धान्त या दर्शन मात्र नहीं है। उसका **ज्ञान-मय क्रियात्मक पक्ष** भी है और वही वास्तविक महत्त्व-वाला है। अतः निवेदन है कि **'चण्डी' मासिक पत्रिका** का सदस्य आज ही बनें।

वार्षिक मूल्य ६५-०० रु० । एक प्रति ६-०० रु०

'मन्त्र-तन्त्र-यन्त्र' मासिक पत्रिका की आलोचना—

'कुण्डलिनी-जागरण विशेषांक'

'कुल-भूषण' पं० रमादत्त शुक्ल, प्रयाग (उ० प्र०)

जोधपुर के विख्यात **डा० श्रीमाली जो** भारतीय गूढ़ विद्याओं के प्रचार-प्रसार के लिए प्रभावी योग-दान करते आए हैं। आज के अंग्रेजी पढ़े-लिखे एवं पाश्चात्य सभ्यता से अभिभूत धनी-मानी लोग इन विद्याओं के प्रति तेजी से आकृष्ट हो रहे हैं, इस बात का बहुत कुछ श्रेय आपकी ही जैसी चमक-दमकवाली पत्र-पत्रिकाओं, पुस्तकों और माला, पात्र आदि वस्तुओं को ही है। इसके लिए सभी को आपका आभार मानना चाहिए।

इधर दैवयोग से हमारी दृष्टि आपके उक्त मासिक पत्र के नवीनतम मई, ८३ के **'कुण्डलिनी-जागरण विशेषाङ्क'** पर पड़ गई। आर्ट पेपर पर बहु-रङ्गा आवरण-पृष्ठ—पूरा अङ्क बढ़िया चिकने कागज पर छपा और अनेक चित्रों से सु-सज्जित! देखकर ही मन हर्षित हो उठा, किन्तु आवरण-पृष्ठ पलटते ही वही अनुभूति हुई, जो पहले कौर में मक्खी दिखाई देने से होती है—**'प्रथम-ग्रासे मक्षिका-पातः !'**

पृष्ठ १ पर तीन पंक्तियों की **'प्रार्थना'** (?) दी गई है, जो सर्वथा अशुद्ध छपी है। **'प्रदीप कलिका कृति'**—ये तीन शब्द अलग-अलग छापने से निरर्थक हो गए हैं। इन्हें इस प्रकार छापना चाहिए था—**'प्रदीप-कलिकाऽऽकृतिः'**। इसी प्रकार **'ध्याये त्तेजोमयं'** का शुद्ध रूप है—**'ध्यायेत् तेजोमयं।'** तीनों पंक्तियों का अर्थ भी मनमाने ढँग से किया गया है। यहाँ उक्त **'प्रार्थना'** (?) को शुद्ध रूप में देना उचित होगा—

मूलाधारे कुण्डलिनी भुजगाकार-रूपिणी। तत्र तिष्ठति जीवात्मा प्रदीप-कलिकाऽऽकृतिः। ध्यायेत् तेजोमयं ब्रह्म, तेजो ध्यानं परात्परम्॥

अर्थ तो बिल्कुल सीधा-सादा है, किन्तु जिसे शब्दों का ज्ञान ही न हो, वह भला ठीक अर्थ कैसे समझ सकता है! अर्थ को समझाना तो और कठिन है। 'मन्त्र-तन्त्र-यन्त्र-विज्ञान' के सम्पादक-मण्डल में तीन महानुभाव हैं—डा० श्यामलकुमार बनर्जी, श्रीकृष्णमुरारी श्रीवास्तव और श्रीगुरु-सेवक। चौथे हैं प्रधान सम्पादक श्री नन्दकिशोर श्रीमाली। इन चारों में से किसी का ध्यान इस बात पर नहीं गया कि उक्त तीन पंक्तियाँ **'प्रार्थना'**—परक नहीं हैं—**'ध्यान'** - परक हैं! अन्तिम पंक्ति में स्पष्ट लिखा है—**'ध्यायेत्'**। संस्कृत का सामान्य ज्ञाता भी जानता है कि इस शब्द का अर्थ है—**'ध्यान करना चाहिए।'** फिर इन पंक्तियों का शीर्षक 'प्रार्थना' देने का क्या औचित्य है? हिन्दी में जो मनमाना अर्थ दिया गया है, उससे न 'प्रार्थना' का बोध होता है और न 'ध्यान' का ज्ञान हो पाता है! पाठक बन्धु भी उस अर्थ की निरर्थकता पर विचार करें—

"मूलाधार में जो कुण्डलिनी सर्पिणी - रूप में अवस्थित है, वहीं पर कली के रूप में जीवात्मा स्थापित है, उसके तेज-स्वरूप ध्यान से ब्रह्म से पूर्ण साक्षात्कार की अवस्थिति बन जाती है।"

धन्य हैं! हिन्दी भी आपको ठीक-ठीक लिखनी नहीं आती!! भला **'जो'** का **'वहीं पर'** से क्या मेल? फिर 'जो' और **'वहीं पर'** शब्द आप कहाँ से ले आए?? मूल पाठ में **'जो'** शब्द है ही नहीं और **'तत्र'** का अर्थ **'वहीं पर'** नहीं होता—केवल **'वहाँ'** होता है। इसी प्रकार **'कली के रूप में'** कहाँ लिखा

है ? हे सम्पादक - मण्डल - महानुभाव ! कुछ तो पाठकों पर कृपा करें । **'प्रदीप कलिका कृतिः'** को तो अशुद्ध छापा ही, उसका अर्थ भी भ्रष्ट करते आपको लज्जा नहीं आई ! आप में से यदि किसी को संस्कृत का ज्ञान नहीं है, तो किसी सम्मान्य संस्कृतज्ञ से ही पूछ लेते । इस प्रकार **'देव-वाणी'** को विकृतार्थ बनाना कितना धिक्कार-योग्य दुष्कर्म है ! अरे, जीवात्मा **'दीपक की ज्योति-शिखा के आकारवाली'** है—**'कली के रूप में'** नहीं । इस प्रकार का भ्रष्ट प्रकाशन करने से आपकी कीर्ति की कैसी ख्याति होगी, कुछ तो सोचिए ।

किन्तु आप क्यों सोचेंगे ? आप तो इस चक्कर में हैं कि 'हर्रा लगै न फिटकरी, रङ्ग चोखा आवै ।' रुपयों का ढेर आपके कार्यालय में लग जाय और आपको कुछ भी करना न पड़े ! आप कुछ भी ऊट-पटाँग लिख डालें, किन्तु आप पर आँच न आने पाए । इसी से आपने इसी पहले पृष्ठ पर—**'प्रार्थना'** (?) के ठीक नीचे अपने विलक्षण **'नियम'** निम्न प्रकार घोषित कर डाले हैं—

* तर्क-कुतर्क करनेवाले पाठक प्रकाशित **पूरी सामग्री** को **गलत** समझें (अर्थात् गलत ही है) । * किसी स्थान, नाम या घटना का **किसी से कोई सम्बन्ध नहीं** है (अर्थात् सभी काल्पनिक हैं) । * पत्रिका के लेखकों के पते या उनके बारे में **जानकारी देना सम्भव नहीं** (काल्पनिक लेखकों का क्या पता-ठिकाना !) । * किसी भी लेख या सामग्री के बारे में **वाद - विवाद या तर्क नहीं मान्य होगा** (कैसे मान्य होगा !) । न ही लेखक, प्रकाशक, मुद्रक या सम्पादक **जिम्मेदार** होंगे (शाबाश !) । * कार्यालय से प्रेषित सामग्री अथवा यन्त्र के **असली या नकली** के बारे में—**प्रभाव या न प्रभाव होने** के बारे में **हमारी जिम्मेदारी नहीं होगी** (क्या कहने !) । * पत्रिका में प्रकाशित किसी भी साधन में सफलता या असफलता, हानि-लाभ आदि की **जिम्मेदारी साधक की स्वयं की होगी** (बहुत ठीक !) । पत्रिका में प्रकाशित आयुर्वेदिक औषधियों का प्रयोग **पाठक अपनी जिम्मेदारी पर ही करें ।**

वाह ! कैसी चतुराई - भरे नियम हैं, जिन पर आज के **'आँख के अन्धे, गाँठ के पूरे'** लोगों का ध्यान ही नहीं जायगा । जब **'गाँठ'** खाली हो जायगी, **आँखें खुलेंगी** और अपने ठगे जाने का बोध होगा तथा कुछ करने की सोचेंगे, तब उक्त नियमों को जानकर हाथ मलकर रह जायँगे । कल्पना करें, उस समय कितने उल्लास में होंगे **'मन्त्र-तन्त्र-यन्त्र विज्ञान'** के उक्त सम्पादक महानुभाव एवं अन्य कर्ता-धर्ता लोग । ताली बजा-बजाकर एक दूसरे की पीठ ठोकेंगे और कहेंगे—**कैसा बुद्धू बनाया !**

'चण्डी' के पाठकों में कुछ ऐसे बन्धु हैं, जिनके पास रुपयों की भरमार है और तन्त्र-मन्त्र-यन्त्र विद्याओं के प्रति घोर आकर्षण ! भले ही वे पढ़ न पाएँ, समझ न पाएँ—किन्तु चमक - दमकवाला ऐसा साहित्य उन्हें **'विष-भरे कनक-घट'** जैसा अपनी ओर लालायित कर लेता है । धन - लोलुप को तो 'सोने का घड़ा' चाहिए ही, भले उसमें विष ही भरा हो ! अपने ऐसे पाठक बुद्धू न बनने पाएँ, इस उद्देश्य से यहाँ कुछ निवेदन किया जा रहा है । इस निवेदन में यदि कुछ 'व्यंग्य' अथवा 'कटूक्ति' किसी को जान पड़े, तो उसके लिए हम क्षमा - प्रार्थी हैं । वह सब प्रकाशित त्रुटियों के निवारणार्थ है, किसी की छवि धूमिल करने के लिए नहीं । जैसा कि आदि में लिख चुके हैं कि इस प्रकार के **'आकर्षक'** किन्तु **'भ्रष्ट'** प्रकाशन से भी भारतीय गूढ़ विद्याओं की सेवा ही हो रही है—उनका प्रचार हो रहा है । अतः हम उनके प्रशंसक ही हैं । हाँ, यदि इस निवेदन के फल - स्वरूप कथित त्रुटियाँ दूर हो सकीं और यथा-सम्भव शुद्ध स्वरूप में आगामी अङ्क प्रकाशित हो सकें, तो **'सोने में सुहागा'** लोकोक्ति चरितार्थ हो सकेगी ।

(शेष अगले अङ्क में)

श्रद्धाञ्जलि

'कौल-मार्तण्ड' पं० कमलाकान्त मिश्र

• डा० रमेशचन्द्र वर्मा, सहरसा (बिहार)

परमपूज्य गुरु-प्रवर पण्डित कमलाकान्त मिश्र जी का मणिपुर-वास ३ मई, १९९३ को उनके अपने गाँव 'पुरीख' में हो गया। वे पिछले छः महीनों से अस्वस्थ थे। यों उनकी पत्नी का निधन १९९० की जनवरी में हो गया था, उसके बाद ही उनका शरीर शिथिल हो गया था क्योंकि पारिवारिक बोझ का एक बहुत बड़ा सम्बल खो गया था और उनकी एक परम प्रिय शिष्या श्रीमती नागेश्वरी देवी का, जो पूर्णाभिषिक्त साधक डा० रमेशचन्द्र वर्मा की शक्ति थीं और स्वयं पूर्णाभिषिक्त साधिका थीं तथा गुरूपदिष्ट मार्ग का अक्षरशः पालन करती थीं, १४ दिसम्बर, १९९१ को निधन हो गया था। इससे भी वे कुछ टूट-से गए थे। संसार की नश्वरता का पूर्ण बोध तो उन्हें था ही और शिष्यों में भी उसका यदा-कदा उल्लेख किया करते थे, किन्तु व्यवहारतः उन्हें जब उसका साक्षात्कार करना पड़ा, तो वे कुछ विरक्ति-भाव से युक्त हो गए। वृद्धावस्था ने उन्हें विवश कर दिया।

पूज्य मिश्र जी नब्बे वर्ष के थे। बाल्यावस्था में संस्कृत की शिक्षा प्राप्त करने के पश्चात् वे अध्यात्म-साधना की ओर प्रवृत्त हुए। उनका वंश गुरु-वंश रहा है। पूर्व-पुरुषों में पण्डित लालजी मिश्र उच्च कोटि के साधक थे और उनकी आध्यात्मिक उपलब्धि की अनेक कथाएँ अब भी प्रचलित हैं। संस्कृत-शिक्षा के पश्चात् गुरु-देव पूर्णतया **'कौल-साधना'** में जुट जाना चाहते थे, किन्तु उनके परिवार के अन्य सदस्यों—यथा माता-पिता ने चाहा कि वे गार्हस्थ्य जीवन का निर्वाह करते हुए साधना - रत हों। फलतः गृहस्थी का भार सँभालते हुए उन्होंने पूरे उत्तर बिहार में **'कौल-साधना'** का अलख जगाया। दरभङ्गा, मुङ्गेर, भागलपुर, सहरसा, सुपौल, मधेपुरा एवं पूर्णिया जिलों में उनके शिष्यों की अच्छी संख्या है। उनके सबसे पहले शिष्य **'पटौरी'** ग्राम के श्री अनिरुद्धलाल दास जी थे, जिन्होंने उन्हें दीक्षा देने के लिए विवश किया था। मिश्र जी दीक्षा देना नहीं चाहते थे। **'गुरु'** बनना उन्हें नहीं रुचता था, किन्तु **'कुल-धर्म'** में कुल-गुरुओं की महत्ता को स्वीकार करते हुए उन्होंने उन्हें दीक्षा दी। इस दीक्षा के पश्चात् दास जी की चतुर्दिक् उन्नति हुई। वे लगभग सौ वर्षों तक जीवित रहे और पुरुषार्थ के चारों फलों की प्राप्ति में सफल हुए।

फिर तो दीक्षा देने का पवित्र कार्य लेना उन्होंने स्वीकार किया और रात-दिन स्वयं साधना करते हुए शिष्य-मण्डली में घूम-घूम कर वे तन्त्र-साधना के महत्त्व के प्रचारार्थ निरन्तर जुड़े रहे।

सन् पचास के आस-पास उनका सम्बन्ध 'चण्डी'-प्रकाशन से हुआ और वे **'कौल-कल्पतरु'** पं० देवीदत्त शुक्ल जी के सम्पर्क में आए। शुक्ल जी के आग्रह के अनुरूप वे शिष्यों के बीच जा - जाकर 'चण्डी' मासिक के सदस्य बनने का आग्रह करते और 'चण्डी' के अनेक ग्राहक उन्होंने बनाए। जब शुक्ल जी १९७१ में मणिपुर - वासी हुए, तो उन्होंने 'चण्डी' की वित्तीय कठिन स्थिति से घबड़ाकर पत्रिका को बन्द न करने के लिए बार - बार 'चण्डी' के तत्कालीन सम्पादक **'कुल-भूषण'** पं० रमादत्त शुक्ल को प्रोत्साहित किया, लोगों से चन्दा उगाहा और 'चण्डी' को जीवित रखने के लिए सभी प्रयास किए। उन्हीं की प्रेरणा से और उन जैसे अन्य अनेक साधकों के प्रोत्साहन से 'चण्डी' अपने नए रूप में अभी तक **'कुल-धर्म'** की सेवा कर रही है।

१९९६ में उन्होंने शुक्ल जी के आग्रह पर **'अद्वैत-शक्ति-साधना-सत्सङ्ग'** की स्थापना **'सहर्षा'** में की। उसकी प्रत्येक महीने में शुक्लाष्टमी की सन्ध्या में बैठक होने लगी और अब भी होती है। जब

तक वे स्वस्थ रहे, इस शुक्लाष्टमी के सत्सङ्ग में अवश्य उपस्थित होकर शक्ति-साधकों को मातृ - भक्ति के महत्त्व बताते रहे। वे इस 'अद्वैत-शक्ति-साधना-सत्सङ्ग' के स्थायी अध्यक्ष रहे। अभी भी वे अध्यक्ष थे। उन्होंने इस 'सत्सङ्ग' के विस्तार की भी योजना बनाई—'सहरसा' में चार स्थानों पर 'सत्सङ्ग' प्रारम्भ हुआ। ग्रामीण क्षेत्रों में 'वनगाँव, पटोरी, पुरीख' एवं 'जगतपुर' में आज भी ये 'सत्सङ्ग' चल रहे हैं। विभिन्न जिलों में फैले उनके शिष्यों में मात्र तीन पूर्णाभिषिक्त साधक हैं—१ डा० रमेशचन्द्र वर्मा, २ श्री अमरेन्द्रकुमार लाल एवं ३ श्री छत्रधारी दास। कुल पाँच अभिषिक्त साधक हैं—१ श्री रमापतिलाल दास, २ श्री सुरेशलाल दास, ३ श्री गणेशलाल दास, ४ श्री सतीशचन्द्र वर्मा एवं ५ श्री यदुनाथलाल दास। दो अभिषिक्त साधकों—श्री रामेश्वरलाल दास एवं श्री कुलदीपनारायणप्रसाद का मणिपुर-वास हो चुका है। शाक्ताभिषेक देने में उन्होंने यह शर्त बना रखी थी कि साधक को कम-से-कम सवा करोड़ का जप करना चाहिए। गुरु का सत्सङ्ग, देवता, मन्त्र एवं गुरु पर विश्वास का होना अपरिहार्य है। इसीलिए दीक्षा देने के बाद वे शिष्यों को जगाते अवश्य थे, लेकिन यह देखकर कि साधक बनने की चाह अधिकांश लोगों में नहीं है, वे थक जाते थे और फिर अभिषेक नहीं देते थे, लेकिन वे अध्यात्म के राज-मार्ग पर यात्रा करने में सदा प्रवृत्त करते रहते थे।

गुरु-देव की कौल-निष्ठा से प्रभावित होकर श्यामानन्द जी, नेपाल के राजा शमशेर जङ्ग बहादुर जैसे श्रेष्ठ साधक उन्हें बराबर अपने सम्पर्क का लाभ पहुँचाते रहे। जब वे इनके पास जाते, तो वे बाँसों उल्लास से उछल उठते—**'दिने दिने साधक-सङ्गमोऽस्तु।'** श्यामानन्द जी तो उन्हें कई दिनों तक रोक लेते थे और कहते—**'ये ही क्षण तो सच्चे क्षण हैं।'**

यों तो पूज्य गुरु-देव की प्रारम्भिक शिक्षा अपनी माताश्री से हुई थी, किन्तु उन्होंने शाक्ताभिषेक पण्डित चण्डेश्वर जी झा से लिया था। पण्डित झा 'कामाख्या पीठ' में कई वर्षों से तपस्या-रत थे और उसके बाद 'मधुबनी' जिले के 'हरिनगर' गाँव में अपना आश्रम बनाकर रहते थे। नेपाली पीतल की एक अत्यन्त सुन्दर काली प्रतिमा की स्थापना कर हरिनगर के श्मशान-घाट में विरक्त जीवन बिता रहे थे। उनसे ही उन्होंने उत्तर दीक्षाएँ ली थीं।

१९७३ में आयोजित **'अद्वैत - शक्ति - साधना - सत्सङ्ग'** के अधिवेशन में शाक्त बन्धुओं ने उन्हें **'कौल-मार्तण्ड'** की उपाधि दी थी। इस उपाधि को उन्होंने बड़ी झिझक के साथ स्वीकार किया था।

वस्तुतः 'कर्म-काण्ड' और 'तन्त्र-शास्त्र' के वे तेजस्वी शिखर - पुरुष थे। गुरु - क्रम से उन्होंने तन्त्र-साधना-सम्बन्धी उन समस्त विधानों को अपनी जिह्वा पर धारण कर रखा था, जो 'महा-निर्वाण तन्त्र' और 'कुलार्णव तन्त्र' में हैं। एक बार तो मैंने ही उनसे कहा था—'गुरु-देव! पुस्तकों में जो बातें पढ़ने को मिलती हैं, वे तो आप पहले ही बता चुके हैं।' तो उन्होंने कहा कि 'गुरु-परम्परा से जो ज्ञान-धारा प्रवाहित होती रही है—वही तो पुस्तकों में है।' अथाह था उनका तन्त्र - साहित्य का ज्ञान और कर्म-काण्ड के विविध प्रकारों को तो उन्होंने हस्तामलक कर लिया था।

'मणिपुर - वासी' होकर भी 'कौल - मार्तण्ड' गुरु - देव अपने द्वारा स्थापित एवं सञ्चालित **'सत्सङ्ग'**-संस्था द्वारा तन्त्र-जगत् को प्रोत्साहित करते रहेंगे, इसमें सन्देह नहीं। मैं निम्न शब्दों के साथ उन्हें प्रणाम करता हूँ—

हे गुरु - देव प्रणाम, बारम्बार प्रणाम!
सम्मुख हाथ जोड़कर, नत-शिर होकर, हूँ करता प्रणाम!
बाँएँ से प्रणाम, दाएँ से प्रणाम, पीछे से प्रणाम, चतुर्दिशाओं से प्रणाम!
मेरा प्रणाम स्वीकार करो, मेरा उद्धार करो। गुरु-देव! प्रणाम, बारम्बार प्रणाम!

'चण्डी' के ५१ वें वर्ष [अप्रैल, ६२] से प्रकाशित

अभूत-पूर्व 'प्रयोग'-साहित्य

साधनमाला

[ज्येष्ठ-अङ्क (जून, ६३) से आगे]

(१०८)

मन्त्र-शक्ति से परोपकार

श्री भैरवानन्दनाथ, चकराघाट, सागर (म० प्र०)

[तन्त्र-साधना के क्षेत्र में आनेवाले अधिकांश व्यक्तियों की यह इच्छा होती है कि अपनी 'सिद्धि' से लोक-हित के लिए कुछ कर सकें और 'यश' पा सकें। ऐसी भावना रखनेवालों के लिए यहाँ कुछ उपयोगी साधन वर्णित हैं। इन प्रयोगों या साधनाओं को करने के पहले जिस मन्त्र की पूर्व-सेवा अथवा 'पुरश्चरण' का उल्लेख नहीं है, उसका दस हजार 'जप' और घृत, शर्करा, मधु, तिल, यव (जौ), गुग्गुल तथा चन्दन-चूर्ण आदि के मिश्रण से एक हजार 'हवन' कर लेना चाहिए। ऐसा कर लेने से 'मन्त्र' में शक्ति आएगी और 'प्रयोग' सफल होने में कोई संशय नहीं रहेगा।

किसी भी 'प्रयोग' को करने से पूर्व अपने पूज्य श्रीगुरु-देव की आज्ञा लेना अनिवार्य है। अन्य आवश्यक जानकारी 'प्रयोग' के साथ दी गई है। यदि किसी को कोई और शङ्का हो, तो पत्र लिखकर पूछी जा सकती है, किन्तु पत्रोत्तर के लिए लिफाफा अथवा आवश्यक डाक-टिकट अवश्य भेजे जाएँ।—प्रस्तुत-कर्त्ता]

१. ज्वर-नाशार्थ—(अ) भो भो ज्वर-ज्वर ! शृणु-शृणु हन-हन गर्ज-गर्ज छर्द-छर्द सर्व-ज्वर अवट-अवट वज्र-पाणिराज्ञापयति मम (अमुकस्य) शिरो मुञ्च-मुञ्च, कण्ठं मुञ्च-मुञ्च, बाहुं मुञ्च-मुञ्च, हृदयं मुञ्च-मुञ्च, उदरं मुञ्च-मुञ्च, कटिं मुञ्च-मुञ्च, गुह्यं मुञ्च-मुञ्च, ऊरुं मुञ्च-मुञ्च, जानुं मुञ्च-मुञ्च, जङ्घे मुञ्च-मुञ्च, पादौ मुञ्च-मुञ्च, चण्ड-पाणिराज्ञापयति हुं फट् ॥

विधि—गुग्गुलु को ७ या २१ बार अभिमन्त्रित करके जलावें और फिर २१ बार 'जप' करें। साधारण ज्वर एक बार में ही ठीक होगा, आवश्यक होने पर अधिक करें।

(ब) ॐ भस्मायुधाय विद्महे एक-दंष्ट्राय धीमहि तन्नो ज्वरः प्रचोदयात् ॥

(स) उमे-उमे क्लिन्ने शिखे दीप्ते ! चल-चल त्रि-नेत्रे शूल-धारिणि !
अप्रतिहत-वाक्ये उमा-देवि ! सर्व-भूतं रक्ष-रक्ष स्वाहा ॐ फट् ॥

'ब' और 'स' की विधि—उपर्युक्त मन्त्रों में से किसी भी एक से १०८ बार अभिमन्त्रित भस्म ज्वर-पीड़ित व्यक्ति पर छिड़कने से ज्वर नष्ट होता है। मन्त्रों से पहले 'हवन' करे और उस 'भस्म' को सुरक्षित रक्खें। 'प्रयोग' करते समय, इसी 'भस्म' का उपयोग करें।

(द) ॐ नमो भगवते रुद्राय बन्ध-बन्ध, ज्वर-ज्वर, हुं फट् स्वाहा ॥

विधि—इस मन्त्र को जपते हुए, ज्वरार्त व्यक्ति की शिखा बाँध देने से ज्वर का बन्धन हो जाता है। ७ बार जपते हुए शिखा बाँधे। चिकित्सा-शास्त्रों में ज्वर (बुखार) के बहुत से भेद बताए गए हैं। सभी प्रकार के ज्वरों पर इन मन्त्रों का प्रयोग निःशङ्क होकर किया जा सकता है।

२. **छर्दि (वमन, उल्टी होना, कै होना)**—हे हे तिष्ठ-तिष्ठ बन्ध-बन्ध वारय-वारय निरुन्ध-निरुन्ध पूर्णामणि स्वाहा ॥

विधि—रोगी के कण्ठ में, 'पृथ्वी' का ध्यान करते हुए, वमन रुकने तक जपे।

३. **छर्दि और अतिसार (दस्त लगना)**—ॐ पट्टिसीं स्वाहा, ॐ पट्टिषीं स्वाहा ॥

विधि—अपान और उदान 'मुद्रा' से जप करे, तो कुछ ही देर में कै-दस्त रुक जाते हैं।

४. **कामला**—ॐ काम-कामिले ब्रह्मण्ये सत्य-वादिनि न भविष्यसि दीधितिजे विरूपेऽवतर कामं कामिले फुः स्वाहा ॥

विधि—१०८ बार जप कर, अभिमन्त्रित शीतल-जल नित्य कुछ दिनों तक पिलावें।

५. **शिरोरोग**—(अ) ॐ वज्र-कामेश्वरि अमुकं हुं हुं स्वाहा ॥ (ब) ॐ मुटित मुटित लामुटित स्वाहा ॥ (स) ॐ आणि आणि कल्याणि स्वाहा ॥

विधि—(अ), (ब), (स) तीनों मन्त्र सिर-दर्द-नाशक हैं। 'मस्तक' पर हाथ रखकर, १०८ 'जप' करना चाहिए। किसी भी एक मन्त्र का प्रयोग करे।

६. **फोड़े-फुन्सी**—ॐ ह्रीं ह्रीं नमः नमः ।।

विधि—गोरोचन से भोज-पत्र पर लिखकर ताबीज में भरकर गले में बाँधे ।

७. **विविध रोगों पर**—ॐ प्लवः व्योम्नि व्यापिने स्वाहा ।।

विधि—काली गाय के घृत को ३०० बार 'मन्त्र' जप कर पीने से प्लीहा, हृदय-रोग, अरुचि, जिह्वा की जड़ता, ग्रहणी, गैस बनना, वमन तथा शूल का नाश होता है ।

८. **सर्व-रोग-नाशक**—हां क्लीं प्लवः व्योम्नि व्यापिनि स्वाहा ।।

विधि—प्रातः ३ चुल्लू (अञ्जलि) जल १०८ बार अभिमन्त्रित कर पीने से सभी रोग नष्ट होते हैं । यदि स्वस्थ व्यक्ति यह क्रिया नित्य करे, तो उसे कोई रोग न हो ।

विशेष—उपर्युक्त क्रमाङ्क ७ और ८ से अभिमन्त्रित कर किसी भी रोग की औषधि रोगी को दी जाए, तो शीघ्र लाभ होता है । आयुर्वेदिक, एलोपैथिक तथा होम्यो-पैथिक तीनों प्रकार की औषधियों पर समान लाभकारी पाया गया है ।

अब कुछ ऐसे प्रयोग दिए जा रहे हैं, जो वनौषधियों से सम्बन्धित हैं । यथा-साध्य एक ही औषधि के प्रयोग हैं । इन औषधियों को विधि-पूर्वक निमन्त्रित करके ही प्रयोग करने से उनके चमत्कारी गुणों का अनुभव होता है, अन्यथा नहीं । औषधि-निमन्त्रण की विधि के' लिए 'कौल-कल्पतरु चण्डी' का मई, १९७९ का अङ्क देखें । इस प्रकरण के प्रायः सभी प्रयोग अनुभूत हैं ।

१. **अपामार्ग**—(अ) वृश्चिक-दंश (बिच्छू द्वारा डङ्क मारना) पर यह अमोघ है । शरीर के किसी भी अङ्ग में डङ्क लगा हो और विष कितना भी फैल चुका हो, इसकी जड़ से ऊपर से नीचे की तरफ झाड़ा दें । अधिक-से-अधिक तीन मिनट में विष-वेग नष्ट हो जाएगा । फिर जरा-सी जड़ घिसकर दंश-स्थान पर लगा दें, पूरा आराम होगा ।

वृश्चिक-दंश पर इससे अच्छा अन्य कोई मन्त्र-तन्त्र या औषधि नहीं मिली । मैंने मन्त्र-तन्त्र और औषधियों से निराश पीड़ितों को भी ज्यादा-से-ज्यादा पाँच मिनट में ठीक किया है ।

(ब) किसी महिला को प्रसव-पीड़ा हो रही है, किन्तु बच्चा बाहर नहीं आ रहा है, तो लगभग ४ अंगुल की इसकी जड़ जल से धोकर दाई या अन्य महिला से गर्भवती की योनि में रखवा दें । मिनटों में शिशु बाहर आ जाएगा, किन्तु सावधान रहें, प्रसव होते

ही जड़ तत्काल बाहर निकाल दें अन्यथा गर्भाशय भी बाहर आ सकता है । ज्यादातर जड़ भी बच्चे के साथ बाहर आ जाती है, पर यदि ऐसा न हो, तो सावधानी रखें ।

(स) रक्त अपामार्ग को सोमवार को निमन्त्रित करें और मङ्गलवार को ग्रहण करके लाल धागे से बाँधकर शीघ्र-पतन के रोगी की कमर में बाँधे । रोगी को रोग से मुक्ति मिलेगी और आपके गुण गाएगा । एक इञ्च का टुकड़ा पर्याप्त है ।

२. **मयूर-शिखा**—(अ) किसी भी शुभ दिन, तिथि और नक्षत्र में ग्रहण करके छोटे बच्चों के गले में ताबीज में भरकर पहनाएँ । बाल-ग्रह, भूत-प्रेत, शाकिनी आदि से मुक्ति मिले ।

(ब) पुष्य नक्षत्र में ग्रहण करके धारण करने से भी उपर्युक्त फल मिलेगा । इसकी सूक्ष्म शाखा भी दुष्ट-ग्रहों का शमन करती है ।

(स) पुष्य नक्षत्र में ग्रहण की गई मयूर-शिखा घी के साथ पीसकर १ तोला की मात्रा में पिलाने से सर्प का विष तुरन्त उतर जाता है । आवश्यक होने पर १५-१५ मि० पर २-३ बार दें ।

३. **श्वेतार्क**—(अ) रविवार को पुष्य नक्षत्र में ग्रहण की गई श्वेतार्क-मूल धारण करने से प्रेत-बाधा नष्ट होती है ।

(ब) यही मूल स्त्री धारण करे, तो पति तथा ससुराल से कलह की निवृत्ति होकर सौभाग्य बढ़े ।

(स) पुष्य नक्षत्र में ग्रहण की हुई श्वेतार्क-मूल तथा श्वेत-पुनर्नवा-मूल दोनों बराबर मात्रा में लें । इन्हें पीसकर सूक्ष्म चूर्ण बनावें और चावलों के पानी के साथ १ तोले की मात्रा में पिएँ, तो एक वर्ष तक सर्प का भय नहीं रहता ।

(द) पुष्य नक्षत्र-युक्त रविवार को श्वेतार्क-मूल ग्रहण करके गणेश जी की मूर्ति बनाकर गणेश-मन्त्र से पूजन-जपादि करे, तो दुःख-दारिद्र्य का नाश होकर सुख-सम्पत्ति की वृद्धि हो ।

४. **कृष्णाऽपराजिता**—(अ) पुष्य नक्षत्र में ग्रहण की हुई मूल १ तोला को ५ तोले बकरी के दूध में पीसकर ऋतु-स्नान के बाद तीन दिनों तक प्रातः निराहार दे, तो वन्ध्या भी गर्भ धारण करे ।

(ब) यही मूल काले सूत्र [धागा] से कमर में बाँधी जाए, तो शिश्न की शिथिलता नष्ट हो ।

(स) पुष्य नक्षत्र में अधो-लिखित मन्त्र को १०८ या कम-से-कम २१ बार जप करके मूल ग्रहण करके कण्ठ या भुजा में बाँधें, तो किसी भी अस्त्र-शस्त्र के प्रहार से रक्षा हो। ग्रह-पीड़ा, ज्वर, भूत-बाधा, सर्प-भय आदि का नाश हो और सभी प्रकार से रक्षा हो—

ॐ नमो भगवति, वज्र-शृङ्खले ! हन हन, ॐ भक्ष भक्ष, ॐ खादय खादय, ॐ अरे रक्तं पिब कपालेन, रक्ताक्षि ! रक्त-पटे ! भस्माङ्गि ! भस्म-लिप्त-शरीरे ! वज्रायुधे ! वज्र-प्राकार-निचिते! पूर्वां दिशं बन्ध बन्ध, ॐ दक्षिणां दिशं बन्ध बन्ध, ॐ पश्चिमां दिशं बन्ध बन्ध, ॐ उत्तरां दिशं बन्ध बन्ध, नागान् बन्ध बन्ध, नाग-पत्नीर्बन्ध बन्ध, ॐ असुरान् बन्ध बन्ध, ॐ यक्ष-राक्षस-पिशाचान् बन्ध बन्ध, ॐ प्रेत-भूत-गन्धर्वादयो ये केचिदुपद्रवास्तेभ्यो रक्ष रक्ष, ॐ ऊर्ध्वं रक्ष रक्ष, ॐ अधो रक्ष रक्ष, ॐ क्षुरिकं बन्ध बन्ध, ॐ ज्वल महा-बले ! घटि घटि, ॐ मोटि मोटि, सटावलि, वज्राग्नि, वज्र-प्राकारे ! हुं फट्, ह्रीं हूं श्रीं फट् ह्रों हः फूं फें फः, सर्व-ग्रहेभ्यः सर्व - व्याधिभ्यः सर्व - दुष्टोपद्रवेभ्यो ह्रीं अशेषेभ्यो रक्ष रक्ष ॥

विशेष—जब भी किसी औषधि को किसी मन्त्र से अभिमन्त्रित करके ग्रहण करना हो, तो निर्दिष्ट मन्त्र का जप निर्दिष्ट संख्या में पहली बार तब करे, जब उसे निमन्त्रण देने जाए। फिर दूसरी बार जप तब करे, जब उसे ग्रहण करने जाए और औषधि को घर लाकर पुनः उसका पूजन करके तीसरी बार मन्त्र का जप करके औषधि को सुरक्षित रखें। इस प्रकार औषधि मन्त्र-सिद्ध हो जाती है और यथोक्त फल देती है।

सारे प्रयोग निरापद हैं और सरलता-पूर्वक सिद्ध हो जाते हैं। प्रयोग-काल में जिस व्यक्ति पर प्रयोग किया जाए, उसके द्वारा कुछ दान-पुण्य अवश्य करवाना चाहिए। श्रद्धा-भक्ति और आस्था के मेल से अवश्य ही सिद्धि होगी और साधक को पुण्य तथा यश-लाभ होगा।

(१०६)

श्री शत्रु-विध्वंसिनी-स्तोत्र

विनियोग—ॐ अस्य श्रीशत्रु-विध्वंसिनी-स्तोत्र-मन्त्रस्य ज्वाला-व्याप्तः ऋषिः, अनुष्टुप् छन्दः, श्रीशत्रु-विध्वंसिनी देवता, शत्रु-जयार्थे (उच्चाटनार्थे नाशार्थे वा) जपे पाठे विनियोगः ॥

ऋष्यादि-न्यास—शिरसि ज्वाला-व्याप्त-ऋषये नमः । मुखे अनुष्टुप्छन्दसे नमः । हृदि श्रीशत्रु-विध्वंसिनी-देवतायै नमः । अञ्जलौ शत्रु-जयार्थे (उच्चाटनार्थे नाशार्थे वा)जपे पाठे विनियोगाय नमः ।।

कर-न्यास—ॐ शत्रु-विध्वंसिनी अंगुष्ठाभ्यां नमः । ॐ त्रिशिरा तर्जनीभ्यां नमः । ॐ अग्नि-ज्वाला मध्यमाभ्यां नमः । ॐ घोर-दंष्ट्रो अनामिकाभ्यां नमः । ॐ दिगम्बरी कनिष्ठिकाभ्यां नमः । ॐ रक्त-पाणि करतल-कर-पृष्ठाभ्यां नमः ।।

हृदयादि-न्यास—ॐ रौद्री हृदयाय नमः । ॐ रक्त-लोचनी शिरसे स्वाहा । ॐ रौद्र-मुखी शिखायै वषट् । ॐ त्रि-शूलिनो कवचाय हुम् । ॐ मुक्त-केशी नेत्र-त्रयाय वौषट् । ॐ महोदरी अस्त्राय फट् ।।

'फट्' से ताल-त्रय दें (तीन बार ताली बजावें) और **'ॐ रौद्र-मुख्यै नमः'** से दशों दिशाओं में चुटकी बजाकर **दिग्-बन्धन** करें ।

स्तोत्र : "ॐ शत्रु-विध्वंसिनी रौद्री, त्रिशिरा रक्त-लोचनी ।
अग्नि-ज्वाला रौद्र- मुखी, घोर-दंष्ट्री त्रि-शूलिनी ।।१
दिगम्बरी मुक्त - केशी, रक्त - पाणि महोदरी ।"

फल-श्रुति : एतैर्नामभिर्घोरैश्च, शीघ्रमुच्चाटयेद् वशी,
इदं स्तोत्रं पठेन्नित्यं, विजयः शत्रु-नाशनम् ।
सहस्र - त्रितयं कुर्यात्, कार्य - सिद्धिर्न संशयः ।।

विशेष—यह स्तोत्र अत्यन्त उग्र है । भोज-पत्र पर लिखा हुआ मिला । एक बार इसका 'प्रयोग' किया, वह पूर्ण फल-दायी सिद्ध हुआ । इसके विषय में निम्न-लिखित तथ्यों पर अवश्य ध्यान देना चाहिए—

(क) स्तोत्र में 'ध्यान' नहीं दिया गया है, अतः 'ध्यान' स्तोत्र के बारह नामों के अनुरूप किया जाएगा । सारे नामों का मनन करने से 'ध्यान' स्पष्ट हो जाता है । (ख) प्रथम और अन्तिम आवृत्ति में नामों के साथ फल-श्रुति मात्र पढ़ें । पाठ नहीं होगा । (ग) घर में पाठ कदापि न किया जाए, केवल शिवालय, नदी-तट, एकान्त, निर्जन-वन, श्मशान अथवा किसी मन्दिर के एकान्त में ही करें । (घ) 'पुरश्चरण' की आवश्यकता नहीं है । सीधे 'प्रयोग' किया जाए । प्रत्येक 'प्रयोग' में तीन हजार आवृत्तियाँ करनी होंगी ।

(११०)

रोग-निवारण प्रयोग

[**साधन-माला** के अन्तर्गत **रोग-नाशक प्रयोग** प्रकाशित हो चुके हैं। यहाँ वहीं **'प्रयोग'** विस्तृत विधि के साथ **श्रीबलराम बली, लखनऊ (उ० प्र०)** प्रस्तुत कर रहे हैं।–सं०]

१. **ॐ उं उमादेवीभ्यां नमः**—इस मन्त्र से सिर-दर्द तथा 'मस्तिष्क'-सम्बन्धी सभी रोग दूर होते हैं। इसकी विशेषता यह है कि यह मज्जा-तन्तुओं की समस्त विकृतियों पर नियन्त्रण करने में समर्थ है। इसके द्वारा अर्ध-विक्षिप्त व्यक्तियों को एक नया जीवन मिल सकता है। स्त्रियों के हिस्टीरिया आदि विकारों पर इस मन्त्र का बड़ा अच्छा प्रभाव पड़ता है। जिन्हें पागल घोषित किया जा चुका हो अथवा मन्द-बुद्धि हों, उन पर यह 'प्रयोग' किया जा सकता है। इस मन्त्र का किसी शुभ मुहूर्त में अथवा 'ग्रहण-काल' में १०००८ बार 'जप' कर सिद्ध करके प्रयोग करें।

२. **ॐ यं यम-घण्टाभ्यां नमः**—इस मन्त्र के १००८ 'जप' से 'नासिका' के समग्र विकार दूर होते हैं।

३. **ॐ शां शाङ्खिनीभ्यां नमः**—इस मन्त्र से आँखों की सभी बीमारियाँ ठीक हो जाती हैं। इसके नियमित 'जप' से नेत्रों की ज्योति बढ़ती है। रतौंधी, मोतियाबिन्द, सँवलबाई आदि रोगों में इस मन्त्र के 'प्रयोग' से बड़ा लाभ होता है। इस मन्त्र से अभिमन्त्रित जल द्वारा आँख धोने से नेत्र-रोगों में बहुत लाभ मिलता है। कन्जेक्टीबाइटिस (आँखों का भयङ्कर रूप से लाल होकर दर्द करना, पानी आना, आँखों का सूज जाना और आँख आ जाना) के प्रकोप के समय इस मन्त्र का 'जप' व अभिमन्त्रित जल से आँख धोने से रोग ठीक हो जाते हैं। इस मन्त्र का 'जप' करनेवाले को अन्धत्व का भय नहीं रहता।

४. **ॐ द्वां द्वार-वासिनीभ्यां नमः**—इस मन्त्र से समस्त 'कर्ण'-विकार दूर होते हैं। कान के किसी भी रोग में इस मन्त्र का प्रयोग सफलता-पूर्वक किया जा सकता है। जिन लोगों को कम सुनाई देता है, यदि वे इस मन्त्र का 'जप' करें, तो श्रवण-शक्ति का विकास होगा और बहरा-पन दूर होगा।

५. **ॐ चिं चित्र-घण्टाभ्यां नमः**—इस मन्त्र से कण्ठ-माला तथा अन्य प्रकार के 'कण्ठ'-रोग दूर होते हैं। विशेषकर 'कण्ठ'-गत कैन्सर पर इसका अद्भुत प्रभाव पड़ता

है। इस मन्त्र का नित्य विधि-वत् 'जप' करने से कण्ठ मधुर हो जाता है तथा वाणी में आश्चर्य-जनक आकर्षण पैदा होता है। यदि कोई गायक इसका प्रयोग करे, तो उसकी गायन-शक्ति उत्तरोत्तर विकसित होती है। सङ्गीतज्ञों के लिए यह मन्त्र विशेष महत्त्व का है, क्योंकि इस मन्त्र के 'जप' से आजीवन कण्ठ-रोग से रक्षा तो रहती ही है, वाणी भी उत्तरोत्तर मधुर होती जाती है।

६. **ॐ सं सर्व-मङ्गलाभ्यां नमः**–इस मन्त्र से 'जीभ'-सम्बन्धी सभी विकार दूर हो जाते हैं। जो तुतलाकर अथवा हकलाकर बोलते हैं, उनके लिए भी यह अचूक 'प्रयोग' है।

७. **ॐ धं धनुर्धारिभ्यां नमः**–इस मन्त्र से सभी प्रकार के 'स्नायु'-रोग दूर होते हैं। 'स्नायु'-रोग बड़े जटिल और सूक्ष्म होते हैं। अतः इनका औषधि द्वारा पूर्ण उपचार सम्भव नहीं है। इस मन्त्र के नित्य विधि-वत् 'जप' से मेरु-दण्ड के विकार भी दूर होते हैं। वृद्धावस्था में हाथ का कँपकँपाना और गर्दन का हिलना भी इससे ठीक हो जाता है। 'धनुर्वात' [टिटनेस] के समय यह मन्त्र 'प्राण'-रक्षक सिद्ध होता है।

८. **ॐ शों शोक-विनाशिनीभ्यां नमः**—इस मन्त्र से समस्त 'मानसिक व्याधियाँ' नष्ट होती हैं। वर्तमान समय में समाज के अधिकांश लोग मानसिक बीमारियों (मनो-रोग) से ग्रसित हैं। प्रत्येक व्यक्ति 'मानसिक तनाव' से पीड़ित है और उसे सोने के लिए नशे की दवाई की आवश्यकता पड़ती है। अतः यह मन्त्र मानसिक कष्ट के लिए परम उपयोगी है। इससे परिवार में व्याप्त कलह-क्लेश, दाम्पत्य जीवन में मन-मुटाव तथा विग्रह की स्थिति भी दूर होती है। यदि युवती या युवक को प्रेम-सम्बन्धों में असफलता के कारण उन्माद हो गया हो अथवा शोक-ग्रस्त होकर वह सदा गुमसुम रहता हो, तो इस मन्त्र के 'प्रयोग' से उसे पूर्ण-रूप से मानसिक स्वस्थता मिलती है।

९. **ॐ लं ललिता-देवीभ्यां नमः**–यह मन्त्र हृदय-रोग के लिए अत्यन्त प्रभावशाली है। इससे हृदय की सभी बीमारियों में बड़ा लाभ सिलता है। आज के युग में 'हृदय'-विकार से सभी लोग पीड़ित रहते हैं। 'बाई पास सर्जरी' में बहुत धन खर्च होता है और जान का भी खतरा रहता है। प्रत्येक व्यक्ति इसमें सक्षम भी नहीं है। हार्ट-पेशेण्ट यदि इस मन्त्र को अधिक-से-अधिक जपते रहें, तो उनका 'हृदय'-विकार समूल नष्ट हो जाता है।

१०. **ॐ शूं शूल-धारिणीभ्यां नमः**—इस मन्त्र से पेट के सभी रोगों का शमन हो जाता है। विशेषकर जलोदर तथा उदर-शूल के रोगियों के लिए यह मन्त्र बड़ा लाभ-कारी है। इसके 'प्रयोग' से पेट का पुराना-से-पुराना रोग ठीक हो जाता है। गर्भ-वती स्त्री की 'प्रसव'-वेदना में, यह 'मन्त्र' बहुत लाभ-दायक है। बच्चे का जन्म बिना कष्ट के सुख-पूर्वक होता है। यदि आप्रेशन से बच्चा पैदा होने की स्थिति पैदा हो गई हो, तो इस मन्त्र के 'प्रयोग' से सामान्य-रूप से बच्चा पैदा कराया जा सकता है।

११. **ॐ कां काल-रात्रीभ्यां नमः**—इस मन्त्र से आंतों के सभी विकार दूर हो जाते हैं। यह अल्सर में राम-बाण सिद्ध होता है।

१२. **ॐ वं वज्र-हस्ताभ्यां नमः**—इस मन्त्र से सभी प्रकार के 'वात'-रोग ठीक हो जाते हैं। गठिया से पीड़ित रोगी यदि 'प्रयोग' करे, तो ठीक हो जाता है। यदि किसी व्यक्ति को 'लकवा' मार गया हो अर्थात् 'पक्षाघात' [पैरालिसिस] हो गया हो, तथा वह यदि बोल पाने की स्थिति में न हो, तो मन-ही-मन 'जप' करे। 'रक्त-चाप' के रोगी भी इस मन्त्र से लाभ उठा सकते हैं।

१३. **ॐ गुं गुह्येश्वरीभ्यां नमः**—इस मन्त्र द्वारा स्त्री-पुरुष के जननेन्द्रिय-सम्बन्धी सभी रोग दूर हो जाते हैं। पुरुषों के समस्त प्रकार के प्रमेह, शीघ्र-पतन, गर्मी, सुजाक आदि रोगों में तथा स्त्रियों के सभी प्रकार के गर्भाशय-विकार, मासिक-धर्म की विकृति व अनियमितता तथा श्वेत-प्रदर अथवा रक्त-प्रदर में यह 'मन्त्र' चामत्कारिक प्रभाव दिखाता है। बवासीर, भगन्दर आदि कठिन रोगों में भी इस मन्त्र से लाभ होता है।

१४. **ॐ पां पार्वतीभ्यां नमः**—इस मन्त्र से रक्त-मज्जा, अस्थि-गत विकार दूर होते हैं। अस्थि-क्षय (बोन टी० बी०) और कैन्सर जैसे भयङ्कर रोगों में भी यह अत्यन्त लाभ-दायक है। यदि शरीर के किसी भी भाग की कोई हड्डी टूट गई हो और प्लास्टर बँधा हो, तो इस मन्त्र के 'प्रयोग' से वह जुड़कर ठीक एवं मजबूत हो जाती है। यह मन्त्र प्रत्येक प्रकार के कुष्ठ-रोगों में भी लाभ-दायक है।

१५. **ॐ मुं मुकुटेश्वरीभ्यां नमः**—इस मन्त्र से सभी प्रकार के 'पित्त'-विकार ठीक हो जाते हैं। अम्ल-पित्त के रोगी इसका प्रयोग अवश्य करें। इस मन्त्र से 'ज्वर' भी शान्त होता है। 'ऐसीडिटी' में भी अच्छा लाभ होता है। लीवर की अनियमितता में भी इसका 'प्रयोग' किया जा सकता है।

१६. **ॐ पं पद्मावतीभ्यां नमः**—इस मन्त्र के 'जप' से कफज व्याधियों पर नियन्त्रण पाया जा सकता है। जिन लोगों को 'कफ' अधिक बनता हो, सर्दी-जुकाम प्रायः बना रहता हो और दवाइयों से लाभ न मिल रहा हो, वे इस मन्त्र का विधि-वत् प्रयोग कर आरोग्य-लाभ उठा सकते हैं। विशेष कर प्लूरिसी, टी०बी० आदि में यह मन्त्र आश्चर्य-जनक ढङ्ग से अपना प्रभाव दिखाता है।

१७. **ॐ कं कल्याण-शोभनाभ्यां नमः**—इस मन्त्र से क्रूर ग्रहों की पीड़ा, भूत-प्रेत-पिशाच आदि के प्रकोप तथा अप-मृत्यु के भय का शमन होता है। जीवन, सुख और शान्ति के साथ, निर्विघ्नता-पूर्वक व्यतीत होता है।

विधि—रोहिणी-पूजन—

उपर्युक्त सभी मन्त्रों में से किसी का भी 'प्रयोग' करने से पहले, एक पाँच वर्ष की कन्या का पूजन निम्न मन्त्र से कर, उसे भोजन कराए तथा वस्त्र एवं दक्षिणा आदि से सन्तुष्ट कर विदा करे। यह भावना करे कि भगवती आदि-शक्ति की कृपा प्राप्त हो गई है। तब 'प्रयोग' (१००८ बार मन्त्र-जप) करे। 'कन्या'-पूजन किसी शुभ-मुहूर्त में करे। 'कन्या-पूजन' मन्त्र इस प्रकार है—

रोहयन्ती च बीजानि, प्राग् - जन्म-संचितानि वै।
सा देवी सर्व-भूतानां, रोहिणीं पूजयाम्यहम्॥

(१११)

श्रीनील-कण्ठ अघोरास्त्र स्तोत्र

विनियोग—ॐ अस्य श्रीभगवान् नील-कण्ठ सदा-शिव-स्तोत्र-मन्त्रस्य श्री ब्रह्मा ऋषिः। अनुष्टुप् छन्दः। श्री नील-कण्ठ सदाशिवो देवता। ब्रह्म बीजं। पार्वती शक्तिः। मम समस्त-पाप-क्षयार्थं क्षेम-स्थैर्यायुरारोग्याभि-वृद्धचर्थं मोक्षादि-चतुर्वर्ग-साधनार्थं च श्रीनील-कण्ठ-सदा-शिव-प्रसाद-सिद्धचर्थे जपे विनियोगः।

ऋष्यादि-न्यास—श्रीब्रह्मा-ऋषये नमः शिरसि। अनुष्टुप् - छन्दसे नमः मुखे। श्रीनील-कण्ठ-सदा-शिव-देवतायै नमः हृदि। ब्रह्म-बीजाय नमः लिङ्गे। पार्वती-शक्त्यै नमः नाभौ। मम समस्त-पाप-क्षयार्थं क्षेम-स्थैर्यायुरारोग्याभि-वृद्धचर्थं मोक्षादि-चतुर्वर्ग-साधनार्थं च श्रीनील-कण्ठ-सदा-शिव-प्रसाद-सिद्धचर्थे जपे विनियोगाय नमः सर्वाङ्गे।

ॐ नमो नील-कण्ठाय, श्वेत-शरीराय, सर्पालङ्कार-भूषिताय, भुजङ्ग-परिकराय, नाग-यज्ञोपवीताय, अनेक-मृत्यु-विनाशाय नमः। युग-युगान्त-काल-प्रलय-प्रचण्डाय, प्रज्वाल-मुखाय नमः। **दंष्ट्रा-कराल-घोर-रूपाय हूं हूं फट् स्वाहा**। ज्वाला-मुखाय, मन्त्र-कराल्राय, प्रचण्डार्क-सहस्रांशु-प्रचण्डाय नमः। कर्पूर-मोद-परिमलाङ्गाय नमः। ॐ ईं ईं नील-महा-नील-वज्र-वैलक्ष्य-मणि-माणिक्य-मुकुट-भूषणाय, हन-हन-हन-दहन-दाहनाय, श्रीअघोरास्त्र मूल-मन्त्र—ॐ ह्रां ॐ ह्रीं ॐ ह्रूं स्फुर अघोर-रूपाय रथ-रथ-तन्त्र-तन्त्र-चट्-चट्-कह-कह-मद-मद-दहन-दाहनाय श्रीअघोरास्त्र-मूल-मन्त्र-जरा-मरण-भय हूं हूं फट् स्वाहा।

अनन्ताघोर-ज्वर-मरण-भय-क्षय-कुष्ठ-व्याधि-विनाशाय, शाकिनी-डाकिनी - ब्रह्म-राक्षस-दैत्य-दानव-बन्धनाय, अपस्मार - भूत-बैताल-डाकिनी-शाकिनी-सर्व-ग्रह-विनाशनाय, मन्त्र-कोटि-प्रकटाय, पर-विद्योच्छेदनाय, हूं हूं फट् स्वाहा। आत्म-मन्त्र-संरक्षणाय नमः।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रौं नमो भूत-डामरी-ज्वाल-वश-भूतानां द्वादश-भूतानां त्रयोदश-षोडश-प्रेतानां पञ्च-दश-डाकिनी-शाकिनीनां हन-हन। दहन-दार-नाथ! एकाहिक-द्व्याहिक-त्र्याहिक-चातुर्थिक-पञ्चाहिक-व्याघ्र-पादान्त-वातादि-वात-सन्निक-कफ - पित्तक-काश-श्वास-श्लेष्मादिकं दह-दह, छिन्धि-छिन्धि, श्रीमहा-देव-निर्मित-स्तम्भन-मोहन-वश्याकर्षणोच्चाटन-कीलनोद्वेषण—इति षट्-कर्माणि कृत्य हूं हूं फट् स्वाहा।

वात-ज्वर, मरण-भय, छिन्न छिन्न नेह नेह भूत-ज्वर, प्रेत-ज्वर, पिशाच-ज्वर, रात्रि-ज्वर, शीत-ज्वर, ताप-ज्वर, बाल-ज्वर, कुमार-ज्वर, अमित-ज्वर, दहन-ज्वर, ब्रह्म-ज्वर, विष्णु-ज्वर, रुद्र-ज्वर, मारी-ज्वर, प्रवेश-ज्वर, कामादि-विषम-ज्वर, मारी-ज्वर प्रचण्ड-धराय, प्रमथेश्वर! शीघ्रं हूं हूं फट् स्वाहा। ॐ नमो नील-कण्ठाय, दक्ष-ज्वर-ध्वंसनाय, श्रीनील-कण्ठाय नमः।

फल-श्रुति—सप्त-वारं पठेत् स्तोत्रं, मनसा चिन्तितं जपेत्।
तत्-सर्वं सफलं प्राप्तं, शिव-लोकं स गच्छति॥

॥ श्रीरामेश्वर-तन्त्रे श्रीनील-कण्ठ-अघोरास्त्र-स्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

(११२)

भगवती श्रीबाला-त्रिपुर-सुन्दरी मन्त्र-विधान

विनियोग—ॐ अस्य श्रीबाला - त्रिपुरा-मन्त्रस्य श्रीदक्षिणामूर्तिः ऋषिः। पंक्ति-श्छन्दः। श्रीबाला त्रिपुर-सुन्दरी देवता। ऐं बीजं। सौः शक्तिः। क्लीं कीलकं। श्रीबाला-त्रिपुर-सुन्दरी-प्रीत्यर्थे जपे विनियोगः।

ऋष्यादि-न्यास—ॐ श्रीदक्षिणामूर्ति-ऋषये नमः शिरसि । ॐ पंक्तिश्छन्दसे नमः मुखे । ॐ श्रीबाला-त्रिपुर-सुन्दरी-देवतायै नमः हृदि । ॐ ऐं बीजाय नमः गुह्ये । ॐ सौः शक्तये नमः पादयोः । ॐ क्लीं कीलकाय नमः नाभौ । ॐ श्रीबाला-त्रिपुर-सुन्दरी-प्रीत्यर्थे जपे विनियोगाय नमः सर्वाङ्गे ।

षडङ्ग-न्यास	कर-न्यासः	अङ्ग-न्यासः
ॐ ऐं	अंगुष्ठाभ्यां नमः	हृदयाय नमः
ॐ क्लीं	तर्जनीभ्यां स्वाहा	शिरसे स्वाहा
ॐ सौः	मध्यमाभ्यां वषट्	शिखायै वषट्
ॐ ऐं	अनामिकाभ्यां हुम्	कवचाय हुम्
ॐ क्लीं	कनिष्ठाभ्यां वौषट्	नेत्र-त्रयाय वौषट्
ॐ सौः	करतल-करपृष्ठाभ्यांफट्	अस्त्राय फट्

ध्यान—अरुण-किरण जालैरञ्जिता सावकाशा, विधृत-जप-वटीका पुस्तकाभीति-हस्ता ।
इतर-कर-वराढ्या फुल्ल-कह्लार-संस्था, निवसतु हृदि बाला नित्य-कल्याण-शीला ।
रक्ताम्बरां चन्द्र - कलाऽवतंसाम्, समुद्यदादित्य - निभां त्रिनेत्राम् ।
विद्याक्ष-मालाऽभय-दान-हस्ताम्, ध्यायामि बालामरुणाम्बुजस्थाम् ॥

मानस पूजा—लं पृथिव्यात्मकं गन्धं श्रीबाला-त्रिपुरा-पादुकाभ्यां नमः अनुकल्पयामि—अधोमुख अंगुष्ठ-कनिष्ठा से । हं आकाशात्मकं पुष्पं श्रीबाला-त्रिपुरा-पादुकाभ्यां नमः अनुकल्पयामि—अधोमुख अंगुष्ठ-तर्जनी से । यं वाय्वात्मकं धूपं श्रीबाला-त्रिपुरा-पादुकाभ्यां नमः अनुकल्पयामि—ऊर्ध्व-मुख अंगुष्ठ-तर्जनी से । रं वन्ह्यात्मकं दीपं श्रीबाला-त्रिपुरा-पादुकाभ्यां नमः अनुकल्पयामि—ऊर्ध्व-मुख अंगुष्ठ-मध्यमा से । वं अमृतात्मकं नैवेद्यं श्रीबाला-त्रिपुरा-पादुकाभ्यां नमः अनुकल्पयामि—ऊर्ध्व-मुख अंगुष्ठ-अनामा से । शं शक्त्यात्मकं ताम्बूलं श्रीबाला-त्रिपुरा-पादुकाभ्यां नमः अनुकल्पयामि—ऊर्ध्व-मुख अंगुष्ठ एवं सभी अँगुलियों से ।

मन्त्र-जप—ऐं क्लीं सौः—कम-से-कम ग्यारह बार नित्य ।

जप-समर्पण—ॐ सर्वान्तरात्म-निलये ! स्वान्तर्ज्योति-स्वरूपिणि !
गृहाणान्तर्जपं मातः ! बाले ! देवि ! नमोऽस्तु ते ॥

श्रीगुरु आदि का पूजन-तर्पण [तीन - तीन बार] भ्रू-मध्य में होते हुए शिरस्थ सहस्रार में—

१ ॐ श्रीगुरु श्रीअमुकानन्दनाथ श्रीअमुकी देव्यम्बा श्रीपादुकां पूजयामि नमः, तर्पयामि नमः। २ ॐ श्रीपरम-गुरु श्रीअमुकानन्दनाथ श्रीअमुकी देव्यम्बा श्रीपादुकां पूजयामि नमः, तर्पयामि नमः। ३ ॐ श्रीपरापर - गुरु श्रीअमुकानन्दनाथ श्रीअमुकी देव्यम्बा श्रीपादुकां पूजयामि नमः, तर्पयामि नमः। ४ ॐ श्रीपरमेष्ठि - गुरु श्रीअमुकानन्दनाथ श्रीअमुकी देव्यम्बा श्रीपादुकां पूजयामि नमः, तर्पयामि नमः।

हृदय में 'कमल' की भावना करते हुए—

१ हसक्षमल-वरयूं श्रीआनन्द-भैरव श्रीपादुकां पूजयामि नमः, तर्पयामि नमः।

२ सहक्षमलवरयीं श्रीआनन्द-भैरवी श्रीपादुकां पूजयामि नमः, तर्पयामि नमः।

वक्ष-स्थल में अधोमुख त्रिकोण की भावना कर उसके निम्न-कोण (नाभि) में—

ॐ श्रीरति श्रीपादुकां पूजयामि नमः, तर्पयामि नमः। फिर दक्ष कोण (दाएं स्तन) में—

ॐ श्रीप्रीति श्रीपादुकां पूजयामि नमः, तर्पयामि नमः। वाम कोण (बाएं स्तन) में—

ॐ श्रीमनोभवा श्रीपादुकां पूजयामि नमः, तर्पयामि नमः। अन्त में उक्त 'त्रिकोण' के मध्य में हृदयस्थ विन्दु में—

ॐ साङ्गां सायुधां स - वाहनां सावरणां श्रीकामेश्वर-सहितां श्रीबाला-त्रिपुर-सुन्दरी-श्रीपादुकां पूजयामि नमः, तर्पयामि नमः।

पाठकों के पत्र

"...'चण्डी' वर्ष ५१, सं० २०४६ के अङ्क ६ में **'कादम्बिनी'** मासिक पत्रिका के **विशेषाङ्क 'मन्त्र - शक्ति के चमत्कार'** की चर्चा अत्यन्त सुन्दर लगी। इस आलोचना के प्रति सम्पादक महोदय श्री राजेन्द्र अवस्थी का सम्भवतः ध्यान जाएगा और वे भविष्य में तन्त्र-मन्त्रादि पर विशेषाङ्क निकालने में सावधानी रखेंगे, ऐसी आशा करनी चाहिए।..."

—श्री भैरवानन्दनाथ, शाम्भवी तान्त्रिक शोध संस्थान, १०८ चकराघाट, सागर–२ (म० प्र०)

"....जोधपुर (राजस्थान) से डा० नारायणदत्त श्रीमाली जी एक पत्रिका **'मन्त्र-तन्त्र-यन्त्र-विज्ञान'** प्रकाशित कर रहे हैं। मई, १९९३ में इस पत्रिका का **'कुण्डलिनी-जागरण विशेषाङ्क'** प्रकाशित हुआ। इसे पढ़कर इसकी प्रस्तुति पर हँसी आ जाती है। (प्रस्तुत **'चण्डी'** अङ्क में इस विशेषाङ्क की आलोचना प्रकाशित हुई है। देखिए, पृ० १०९—सं०)।

श्री नारायणदत्त श्रीमाली जी अपने आपको सर्वज्ञ मानते हैं। सच्चे अर्थों में, एक सच्चा साधक अपने आपको सर्वज्ञ नहीं समझता। साथ ही, साधनाएँ सिखाने अथवा समझाने के लिए हजारों रुपयों की माँग भी नहीं करता। ..."

— श्री शान्तीलाल शारदा, द्वारा पूजा पेण्ट हाउस, राजीव गांधी मार्केट, भीलवाड़ा (राज०)

शारदा - भजनावली

रचयिता : पण्डित कृष्णानन्द मिश्र, ककरा, प्रयाग (उ० प्र०)

१. काहे को भूलि गईं जगदम्बा ?

(मां शारदा वयोवृद्ध साधक-प्रवर पण्डित कमलाकान्त मिश्र, वैद्य, प्रयाग की कुल-देवता हैं। आपके द्वारा विरचित 'मैहर'-धाम की महिमा के सहित 'माँ शारदा के भजन' सभी साधक वन्धुओं के लिए आनन्द-दायक हैं।— सं०)

आगे कह्यो हम दारिद नासब, काहे को भूलि गईं जगदम्बा ?
'मैहर'-धाम पुनीत सोहात, गिरि - शृङ्ग के ऊपर सोहत अम्बा ।।
हंस के ऊपर राजति सुन्दरि, हाथ कमण्डलु पुस्तक अम्बा ।
वीणा बजावति राग निकारति, ब्रह्म-विनोद में झूमति अम्बा ।।१
दास के दुःख विदारति सुन्दरि, गौरिनि के सँग खेलत माई ।
मन्द हँसी अधरान से फूटै, मयङ्क-प्रकाश, दशो दिशि छाई ।।
दास के कारन रूप धरचो जग, काहे न गोद उठावति माई ?
दास तुम्हार है दुःख उठावत, वेगहि अङ्क में लेहु लगाई ।।२
धाए बहू जग—घूमे बहू जग, काहू न बाँह गही धरणी - तल ।
बात बनाए अनेक गुनी - जन, धीरज दीन न नेक मही - तल ।।
झूठहि बात बनावत लोगन, सूम बने हैं न उदार मही - तल ।
सुन्दर शुभ्र - सो मूरति शारद, बाँह गह्यो तब पार मही - तल ।।३
केकर नाम जपौं जग में, अब काहू न नेकहि अङ्क लगावत ।
सूम भए सिगरे जग - नायक, दारिद - रूप धरे सब लागत ।।
रूप दया की—राशि दया की, तू ही अकेलहि नेह लगावति ।
बाँह गहो अब शील की नागरि, शारद सुन्दरि दुःख उबारति ।।४
कोऊ न साथी रह्यो जग में, अब राउर आस बचो जग माहीं ।
शील की सागर ! दृष्टि उठावहु, दारिद नास करौ छिन माहीं ।।
दृष्टि उठावहु—गोद लगावहु, दुःख नसावहु शीतल छाहीं ।
बाँह गहो अब शील की सागर, शारद सुन्दर रूप लखाहीं ।।५

माँ बगलामुखी

• श्री बलराम दुबे,
७ नवलकिशोर मार्ग, लखनऊ (उ० प्र०)

* * *

जय विष्णु शङ्कर भामिनी,
जननी जटा बहु-रूपिणी ।
बगला महा पीताम्बरा,
तू सिद्ध - विद्या - रूपिणी ।।
तू एक जग - संचालिका,
माँ पूजती जन-कामना ।
सिद्ध - विद्या नाम थी,
'मोती' करे तुझ वन्दना ।।

—गुप्तावतार बाबाश्री

* * *

हेम रुचिर पट पीत सरोवर, प्रकटित धन्य स्व-नाम ।
मन्त्र-मयी बगलामुखि वैष्णवि, शक्ति सबल बल-धाम ।।
ऊपर गगन हकार धराधर, धरणी बीज ललाम ।
विन्दु - मयी बगला पीठेश्वरि, ह्रींकारेश्वरि-धाम ।।
बीज-मयी हरि-शक्ति-मयी ह्लीं, मन्त्र-मयी बल-धाम ।
नष्ट करो अरि-व्यूह महा, बगलामुखि मातु प्रणाम ।।
दुश्मन दुष्ट मुखर, मुख-वाणी, स्तम्भित कर-पद-चाल ।
कील करो रसना अरि जिह्वा, बुद्धि हरो अरि ब्याल ।।
प्रीति पराग-पगी वसुधा, नभ विष्णु-प्रिया रति-काम ।
सृष्टि-मयी मधु-गन्ध-मयी भगवन्ति महा-छवि-धाम ।।
गन्ध-पुष्प-मधु-धूप-दीपिका, सरस द्रव्य मधु-पान ।
पूजन-तर्पण-नमन भाव-मय, स्वाहा सहित प्रणाम ।।
क्रोधिनि स्तम्भिनि चँवर-धारिणी, बगलामुखी प्रणाम ।
जय-जय उड्डियान जालन्धर, कामद-गिरि गुरु-धाम ।।
जयति अनन्त-नाथ गुरु जय जय, श्रीकण्ठ-नाथ गुरु नाह ।
नाथ - शिरोमणि दत्तात्रेय गुरु, शत-शत बार प्रणाम ।।
भगवति षष्टि महा-बगले, सुभगे शत-कोटि प्रणाम ।
जय-जय भय-सर्पिणि, भग-वाहिनि, भग-मालिनि सुख-धाम ।।

भगवति भग-शुद्धा भग-पत्नी, जय भग षष्टि प्रणाम ।
जय भव-सृष्टि योनि-भग-धारिणि, पालिनि-स्थिति-विश्राम ।।
अष्ट-कमल-दल-वासिनि ब्राह्मणि, माहेश्वरी प्रणाम ।
जय-जय कौमारी जय वैष्णवि, बाराही बल-धाम ।।
इन्द्राणी जय चामुण्डा जय, जय लक्ष्मी, जय धाम ।
अष्ट - मातृका सङ्ग कमल-दल–वासिनि मातु प्रणाम ।।
जयति जया-विजया अजिता जय, अपराजिता प्रणाम ।
जृम्भिणि स्तम्भिनि मोहिनि जय-जय, आकर्षिणि छवि-धाम ।।
जय असिताङ्ग सङ्ग रुरु भैरव, चण्ड-क्रोध परिवार ।
उन्मत्त मस्त कपालि माल-धर, भीषणेश संहार ।।
जय षोडश-दल-वासिनि बगला, स्वाहा सहित प्रणाम ।
स्तम्भिनि जृम्भिणि मोहिनि माते ! चञ्चलादि गुण-धाम ।।
माता स्वाहा सहित प्रणाम ।।
जय अचला, वश्या, कलिका जय, कल्मषादि तव नाम ।
जय धात्री कल्पान्ता माता, आकर्षिणि अभिराम ।।
माता स्वाहा सहित प्रणाम ।।
शाकिनि जयति अष्ट-गन्धा जय, भोगेच्छा कृत-काम ।
जयति भाविका भाव-मयी माँ, बगलामुखी प्रणाम ।।
जय-जय ह्लींकारेश्वरि अर्पित, कनक-पीठ अभिराम ।
पीता पद्म - पराग - मालिका, भूषण भव्य ललाम ।।
पीताम्बर-परिधान-भूषिता, सुधा-सिन्धु मणि-धाम ।
जयति जयति जय ह्लींकारेश्वरि, बगलामुखी प्रणाम ।।
अरि रसना मुग्दर कर राजित, उग्रवती बल-धाम ।
वात - क्षोभ-तूफान शान्त हो, शमित दुखद परिणाम ।।
हरो सकल अरि, ब्याल नष्ट हों, दुश्मन दुष्ट तमाम ।
कर स्तम्भित मुख-वाच-चाल-पद, मिटें शत्रु अविराम ।।
कील करो रसना अरियों की, बुद्धि हरो अविराम ।।
दुश्मन दुष्ट विनष्ट-त्रस्त हों, बने जगत् सुख-धाम ।
गन्ध-पुष्प-मधु-धूप-दीपिका, सरस द्रव्य मधु-पान ।।
पूजन-तर्पण-नमन भाव-मय, स्वाहा सहित प्रणाम ।
स्वर्ण-शिखर रवि-हेम-किरण नव, कनक-पीठमणि-धाम ।।
अर्पित पीत पुनीत पद्म-सारि, बगलामुखी प्रणाम ।
जयति जयति जय ह्लीङ्कारेश्वरि ! प्रीति कमल निष्काम ।
पद्म - राग अम्लान समर्पित, करत नमन बलराम ।।
माता स्वाहा सहित प्रणाम ।।

कौल-कल्पतरु 'चण्डी'

स्वर-विज्ञान

ज्योतिष-तन्त्र-योग की त्रिवेणी

रोग - निवारण के अनुभूत प्रयोग

!स्वर- विद्या द्वारा फलादेश

अनुकूलन - वशीकरण

अभीष्ट कार्य - सिद्धि

मनोवांछित सन्तान

स्वर का प्रवाह

स्वरोदय - काल

स्वर - विज्ञान

स्वर - परिचय

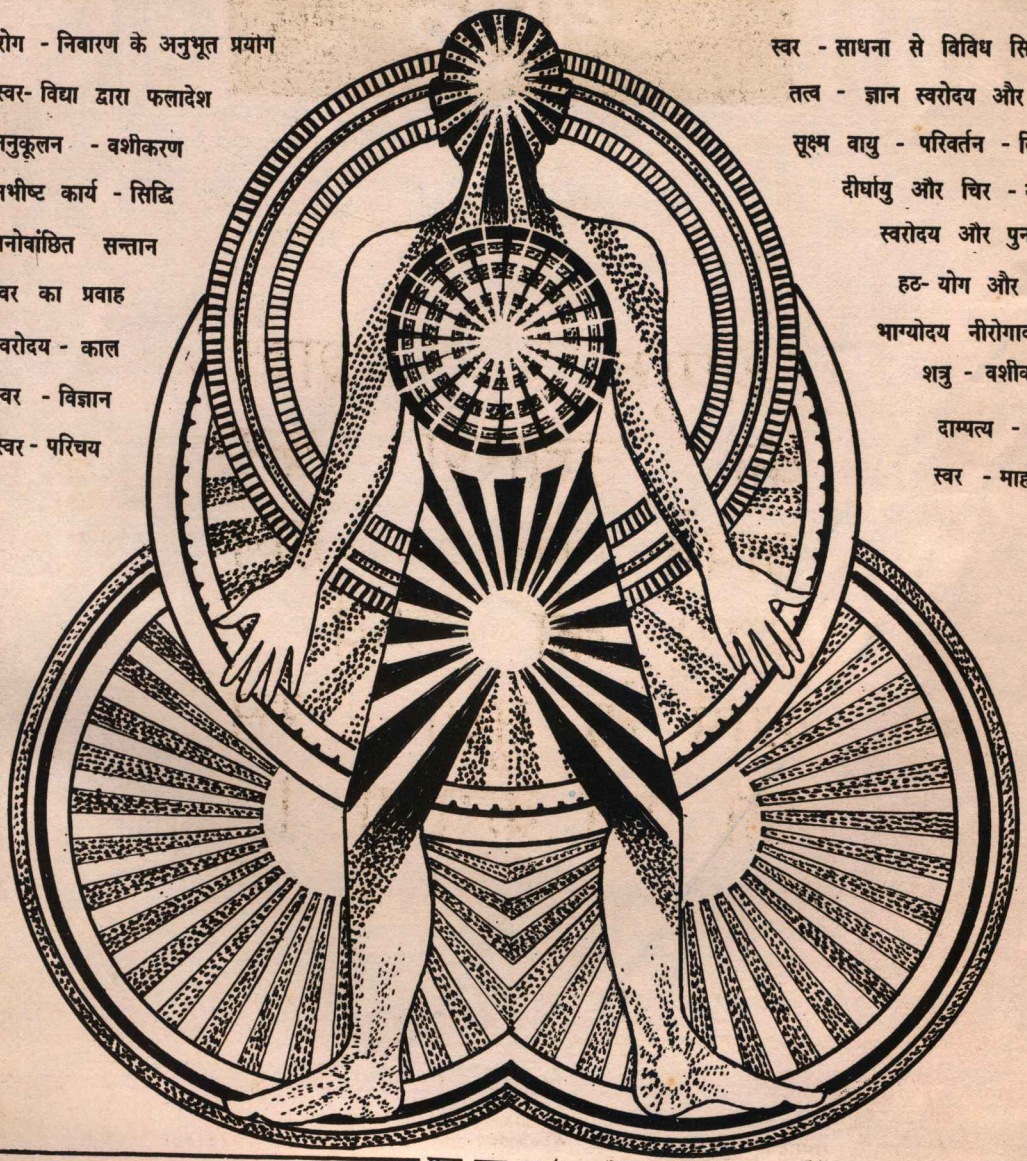

स्वर - साधना से विविध सिद्धियाँ

तत्व - ज्ञान स्वरोदय और योग

सूक्ष्म वायु - परिवर्तन - विज्ञान

दीर्घायु और चिर - यौवन

स्वरोदय और पुनर्जन्म

हठ- योग और स्वर

भाग्योदय नीरोगावस्था

शत्रु - वशीकरण

दाम्पत्य - सुख

स्वर - माहात्म्य

मूल्य मात्र १५/- रु०

रजि० संख्या 32981/57

आषाढ़, २०५० वि० - जुलाई, १९९३

रजि० संख्या AD~96

'श्रीगुरु'

'श्रीगुरु' - शब्द का उच्चारण कर अपने रस - हीन हृदय को ऊर्ध्व - धाम के सुधा - रस का पान कराओ ।

सम्पादक, प्रकाशक एवं मुद्रक : श्रीऋतशील शर्मा, परावाणी प्रेस, प्रयाग-२११ ००६